उड्डीशतन्त्र

हिन्दी टीका सहित

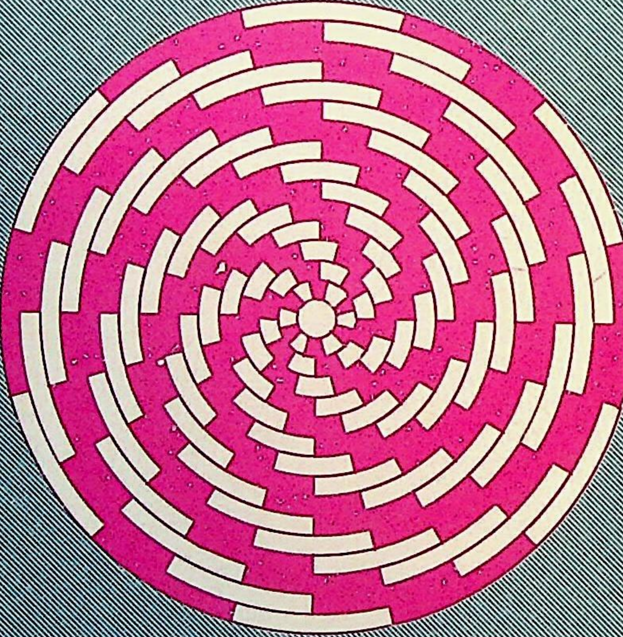

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन
बम्बई

उड्डीशतन्त्र

मुरादाबादनिवासि पं० श्यामसुन्दरलाल त्रिपाठिकृत

हिंदीटीकासहितम्

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई

संस्करण : फरवरी २०१७ संवत् २०७३

मूल्य : ५० रुपये मात्र

© सर्वाधिकार : प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass Prop: Shri Venkateshwar Press, Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s.Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013

भूमिका

देवानां हि यथा विष्णुर्ह्रदानामुदधिस्तथा ।
नदीनां च यथा गङ्गा पर्वतानां हिमालयः ।।
अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां राज्ञामिन्द्रो यथा वरः ।
देवीनां च यथा दुर्गा वर्णानां ब्राह्मणो यथा ।
तथा समस्तशास्त्राणां तन्त्रशास्त्रमनूत्तमम् ।।

अर्थात् जैसे देवताओंमें विष्णु, ह्रदोंमें सागर, नदियोंमें गंगा, पर्वतोंमें हिमालय, वृक्षोंमें पीपल, राजाओंमें इन्द्र, देवियोंमें दुर्गा और चारों वर्णोंमें ब्राह्मण श्रेष्ठ है वैसे ही सम्पूर्ण शास्त्रोंमें तन्त्रशास्त्र श्रेष्ठ है ।

तन्त्रशास्त्रोक्त क्रियाके बलसे ही पूर्व कालके ब्राह्मण ऋषियोंने अद्भुत शक्ति दिखाकर सर्वोपरि प्रधानता प्राप्त की थी, तन्त्रविद्याके द्वारा ही राक्षस-राज रावण और मेघनादने युद्ध करते समय भगवान् रामचन्द्रजीको एवं शेषावतार लक्ष्मणजीको भी अचम्भित करदिया था, इसी विद्याके बलसे राक्षस रणभूमिमें युद्ध करते करते अदृश्य हो जाते और फिर सहसा आकाश मार्गसे शस्त्र वर्षाते थे, जिस समय घोर संकट प्राप्त होता था तभी मेघनाद इस विद्याकी आराधना किया करता था, तंत्रबलसे ही वह इन्द्रजित् कहलाया है, जिस समयँ निकुंभिला नामक देवालयमें बैठ हवन कर रहा था तभी बिभीषणने आकर रामचन्द्र और लक्ष्मणजीसे कहा कि हे भगवन् ! मेघनादका यह अनुष्ठान पूर्णरीतिसे हो गया तो वह फिर मारेसे नहीं मरेगा इस कारण निकुंभिला नामक देवालयमे इसके अनुष्ठानको भंग कीजिये । जब बिभीषणसे ऐसा सुना तब स्वयं लक्ष्मणजी ने हनुमदादि श्रेष्ठ बली वानरोंको लेकर उसके प्रयोगमें विघ्न डाल उसके हवनको नष्ट कर दिया । इत्यादि अनेक तंत्रविद्याके अनुपम प्रभावशाली प्रयोगों का वर्णन वाल्मीकीय रामायण और महाभारतादि पुराणोंमें

पाया जाता है, पुराणोंके अतिरिक्त स्वयं 'अथर्ववेद' जो चारों वेदोंके बीचमें है वह तंत्रविद्याका साक्षिस्वरूप है। उसमें तंत्रविद्याके मारण मोहन वशीकरणादि प्रयोग वैदिक विधानसे वर्णित हैं परन्तु समयके प्रभावसे इस विद्याकी गतिको मनुष्यगण भूल गये हैं और घृणासे इसकी ओर देखते हैं यही नहीं, वरन् इस विद्याको मूर्खोंकी माया कहते नहीं लजाते हैं, स्वयं वेदरूपी भगवान् जिसकी भीत हैं आज उस विद्याकी ऐसी हीन दशा दृष्टि आती है, हा ! कलि ! तेरी माया अपार है।

कलियुगी जीव इस विद्याकी सिद्धि कर सकते हैं, परन्तु जिस भाँति किया चाहते हैं वैसे यह विद्या सिद्धि नहीं दे सकती, पृथ्वी निर्वीर्य नहीं हो सकती। आज दिन भी पूर्ण विधिसे यदि अनुष्ठान किया जाय तो निःसन्देह सिद्धि हो सकती है। पूर्द काल में जितने ग्रंथ तंत्रविद्याके प्राप्त होते थे आज वे अदृश्य हो रहे हैं। बडे आनन्दकी बात है कि ऐसे कठिन समय में भी तन्त्रग्रन्थोंके प्रकाश करनेकी रुचि फिर मनुष्योंके हृदय में लहराने लगी है, उसी से जहाँ तहाँ विद्वानों द्वारा खोज कराकर यन्त्रधीशोंने तन्त्रके अनेक ग्रंथ प्रकाशित किये हैं और कर रहे हैं। मुम्बईमें सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी ने भी अपने जगद्विख्यात "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् यन्त्रालयमें तन्त्रशास्त्रके अनुपम ग्रंथ छापकर प्रकाशित किये हैं और कर रहे हैं; उन्हींके अनुरोसे इस उड्डीशतन्त्रको खोजकर भाषाटीका बना सदाके लिये सर्व स्वत्वसहित उन्हींको छापके प्रसिद्ध करनेके लिये समर्पण कर सम्पूर्ण तांत्रिकोंकी सेवामें सर्मपित करता हूँ और दावेके साथ कहता हूँ कि—गुण ना हेरानो गुणग्राहक हेरानो है।

पाठकगण ! तन्त्रकी सिद्धि कहीं नहीं गयी वरन् तन्त्रसिद्धिकी अभिलाषा करनेवाले ही नहीं हैं। जो मनुष्य तन्त्रविद्याको सीखना चाहें वे पहले सद्गुरुकी खोज करें, खोज करनेसे क्या नहीं मिल सकता है ? सद्गुरुके प्राप्त होने पर उनसे दीक्षित हो उनके बताये मार्गका अनुसरण करने पर सिद्धि प्राप्त करना दुर्लभ नहीं हैं।

यह उड्डीशतन्त्र सम्पूर्ण तांत्रिकों का परम शास्त्रस्वरूप है, स्वयं शिवजीने कहा है कि–जो मनुष्य उड्डीशतन्त्रको नहीं जानता है वह दूसरे पर क्रोध करके क्या कर सकेगा। इस उड्डीशतन्त्रके प्रतापशाली प्रयोगोंके द्वारा कार्य करके मेरुपर्वतको चलायमान करसकता है व सागरको पृथ्वीमें लय करसकता है।

इस उड्डीशतन्त्रके प्रयोगों का अनुष्ठान करनेसे अवश्य सिद्धि प्राप्त होगी मैंने भाषाटीका करते हुए नोटमें बहुतसी बातोंको स्पष्ट किया है तथा और जो कोई बात तन्त्रविषयकी पाठक जानना चाहें मैं उनको यथामति बतला सकता हूँ। तन्त्रशास्त्रका जीर्णोद्धार करना ही हमारा लक्ष्य है। तन्त्रके बहुतसे ग्रन्थोंको मैंने देखा है और बहुतोंकी भाषाटीका करके समय समय पर तांत्रिकोंके भेंट किये हैं, जो 'श्रीवेंकटेश्वर' यन्त्रालय में विक्रयार्थ प्रस्तुत हैं। पाठक वहाँसे सूचीपत्र मँगाकर देख सकते हैं।

समस्त तन्त्ररसिकोंका हितैषी

पंडित श्यामसुन्दरलाल त्रिपाठी,

मुहल्ला–दीनदारपुरा, मुरादाबाद.

उड्डीशतन्त्रकी विषयानुक्रमणिका

विषय.	पृष्ठ.
मंगलाचरण	९
ग्रंथसूचना	,,
तंत्रमहिमा	,,
गुरुमहिमा	,,
षट्कर्मोंके नाम	१०
षट्कर्मोंके लक्षण	,,
षट्कर्मोंके देवता	११
षट्कर्मोंकी दिशाका नियम	,,
षट्कर्मोंका ऋतुकालादिनिर्णय	१२
षट्कर्मोंके तिथि वारका नियम	,,
षट्कर्मोंके नक्षत्र नियम	१४
षट्कर्मोंका कालविशेष कथन	,,
षट्कर्मोंका लग्ननिरूपण	१५
षट्कर्मोंके तत्त्वनिरूपण	,,
षट्कर्मोंके देवताओं का वर्णभेद	,,
निरूपण	१६
षट्कर्मोंके देवताओंकी उत्थितादि अवस्था का निरूपण	,,
षट्कर्मोंके देवताओं का सात्त्विकादि कर्ममें वर्णविशेष चिन्तन	,,
मंत्रोंके अधिष्ठातृदेवताओंका निरूपण	१७
मंत्रोंकी वर्णभेदसे संज्ञानिरुपण	,,
कार्यविशेषमें योजनीय पल्लवादि निर्णय	१८
कर्मविशेषमें हुं वौषट् आदिका निरूपण	२०
मंत्रोंके स्त्रीपुंनपुंसकादि निरूपण	२१
षट्कर्मों के आसन निरूपण	२२
आसन लक्षण	२३
षण्मुद्रानिरूपण	२४
षट्कर्मोंका देवध्याननिरूपण	,,
षट्कर्मोंके कुंडनिर्णय	२५
षट्कर्मोंकी प्रधानताका निरूपण	२६
षट्कर्मोंके कुंभस्थापन	,,
कुंभमें पूजनका नियम	२७
षट्कर्मोंकी मालाका निर्णय	२९
षट्कर्मोंकी जपांगुलीनियम	३१
षट्कर्मोंकी जप करने की दिशाओंका नियम	,,
जपलक्षण	,,
षट्कर्मोंके जपका नियम	३२
षट्कर्मोंके होमकुंडकी दिशाका नियम	३३
षट्कर्मोंके हवनमें द्रव्योंका निरूपण	,,
वह्नीकी जिह्वाका निरूपण	३६
वह्नीके नामों का निरूपण	३८
होमकी व्यवस्था	,,
स्रुक्स्रुव-नियम	३९

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
होमकी मुद्राका वर्णन	४०	उच्चाटन	५३
शान्तिकर्म	४१	आकर्षण	५४.
ज्वरादि-शान्ति	,,	मारण	,,
कुकृत्या-शान्ति	,,	आर्द्रपटी विद्या	५६
विविधआपत्ति-शान्ति	४२	**उत्तरार्द्ध**	
ईश्वरादिक्रोध-शान्ति	,,	मंत्रसिद्धिके सात उपाय	५८
वशीकरण	,,	भ्रामण रोधन वशीकरण पीडन	,,
सर्वजनवशीकरण	४३	शोषण पोषण और दाहन	,,
राज-वशीकरण	४४	भ्रामणलक्षण	,,
स्त्री-वशीकरण	,,	रोधन	५९
पति-वशीकरण	४५	वशीकरण	,,
स्तंभन	४६	पीडन	,,
आसन-स्तंभन	,,	पोषण	,,
अग्नि-स्तंभन	,,.	शोषण	६०
शस्त्र-स्तंभन	४५	दाहन	,,
सैन्य स्तंभन	,,	मन्त्रसिद्धिका लक्षण	,,
सैन्य-विमुखीकरण	४८	मन्त्रसिद्धिका उत्तम लक्षण	६१
जल-स्तंभन	४९	मन्त्रसिद्धिका मध्यम लक्षण	६२
		मन्त्रसिद्धिका अधम लक्षण	,,
मेघ-स्तंभन	,,	दूषित मन्त्रोंका नामनिरूपण	,,
नौका-स्तंभन	,,	दूषित मन्त्रों के नामानुसार लक्षणकथन	६३
मनुष्य-स्तंभन	,,		
निद्रा-स्तंभन	५०	दूषित छिन्न मन्त्रका लक्षण	६४
गोमहिष्यादि-स्तंभन	,,	रुद्धमन्त्र	,,
पशु स्तंभन	,,	शक्तिहीन मन्त्र	६५
मोहन	५१	पराङ्मुख मन्त्रका लक्षण	,,
सर्वजगन्मोहन	,,	दूषित बधिरमन्त्रका लक्षण	,,
विद्वेषण	५२	नेत्रहीन	,,

विषय.	पृष्ठ.
कीलित	,,
स्तंभित	,,
दग्ध	६६
स्रस्त	,,
भीत	,,
मलिन	,,
तिरस्कृत	,,
भेदित	६७
सुषुप्त	,,
मनोन्मत्त	,,
मूर्च्छित	,,
हतवीर्य	,,
हीन, प्रध्वस्त, बाल, कुमार, युवा	६७
प्रौढ	६८
वृद्ध	,,
निर्स्त्रिश	,,
निर्वीर्य	,,
सिद्धिहीन	६९
मन्द	,,
निरंशक	,,
केकर	,,
जीवहीन	,,
घूमित	,,

विषय.	पृष्ठ.
आलिंगित	,,
मोहित	,,
दूषित क्षुधार्त्त मन्त्र का लक्षण	,,
अतिदृप्त	७०
अंगहीन	,,
अतिक्रुद्ध	,,
अतिक्रूर सव्रीड, शान्तचित्त	७०
स्थानच्युत	७१
विकल	,,
निस्नेह	,,
अतिवृद्ध	,,
पीडित	,,
उपरोक्त मन्त्रोंके जपनेसे सिद्धिकी हानि	७२
उपरोक्त दूपित मन्त्रोंकी शुद्धिसे सिद्धि प्राप्त करने की विधि	,,
उपरोक्त मन्त्रोंके दोष दूर करनेका अन्य उपाय	७३
पादुकासाधन	७४
गुटिकासाधन	७५
जलोपरिभ्रमण	७६
मृतसंजीविनी विद्या	७७
अदृश्योपाय	७९

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता

श्रीः

उड्डीशतन्त्र

हिन्दीटीकासहित

पूर्वार्द्ध

मंगलाचरण

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

रावण उवाच

कैलासशिखरासीनं रावणः शिवमब्रवीत् ।
तन्त्रविद्यां क्षणं सिद्धिं कथयस्व मम प्रभो ।। १ ।।

कैलासपर्वतके शिखरपर विराजमान शिवजीसे रावण बोला कि–हे प्रभो ! क्षणमात्रमें सिद्धि देनेवाली तंत्रविद्याको कहो ।। १ ।।

ईश्वर उवाच

साधु पृष्टं त्वया वत्स लोकानां हितकाम्यया ।
उड्डीशाख्यमिदं तन्त्रं कथयामि तवाग्रतः ।। २ ।।

शिवजी बोले –हे वत्स ! तुमने उत्तम प्रश्न किया,सो लोकों के हितके निमित्त उड्डीश नामक तन्त्रको तुम्हारे प्रति कहता हूँ ।। २ ।।

उड्डीशं यो न जानाति स रुष्टः किं करिष्यति ।
मेरुं चालयते स्थानात्सागरैः प्लावयेन्महीम् ।। ३ ।।

उड्डीशतन्त्रके विना जाने मनुष्य क्रोध करके क्या कर सकता है और उड्डीश तन्त्रके ज्ञानसे मेरुपर्वतको स्थानसे चलायमान करता है एवं सागरोंसे पृथ्वीका लय करता है ।। ३ ।।

इन्द्रस्य च यथा वज्रं पाशश्च वरुणस्य च ।
यमस्य च यथा दण्डो वह्नेः शक्तिर्यथा दहेत् ।। ४ ।।

तथैतन्वैमहायोगान्प्रयोज्योद्यमकर्मणि ।
सूर्यं तु पातयेद्भूमौ नेदं मिथ्या भविष्यति ।।५ ।।

जैसे इन्द्रका वज्र, वरुणका पाश, यमराजका दण्ड और अग्निकीशक्ति दाहकारक है, वैसे ही इस उड्डीशतन्त्रके महायोगोंका अनुष्ठान करने पर निश्चय सूर्यको भी आकाशसे पृथ्वीपर गिराते हैं (फिर अन्यकी तो बातही क्या है?) ।। ४-५ ।।

शशिहीना यथा रात्री रविहीनं यथा दिनम् ।
नृपहीनं यथा राज्यं गुरुहीनस्तथा मनुः ।। ६ ।।

जैसे चन्द्र विना रात्रि, सूर्य विना दिन, राजा विना राज्य सूना होता है उसी प्रकार विना गुरुके मंत्र सिद्ध नहीं होता है ।। ६ ।।

पुस्तके लिखिता विद्या नैव सिद्धिप्रदा नृणाम् ।
गुरुं विनापि शास्त्रेऽस्मिन्नाधिकारः कथंचन ।। ७ ।।

पुस्तकमें लिखी विद्या मनुष्योंको सिद्धि नहीं देती, तन्त्रशास्त्रमें विना गुरुके उपदेशसे किसी प्रकारके कार्यका अधिकार नहीं है ।। ७ ।।

अग्रेऽभिधास्ये शास्त्रेऽस्मिन्सम्यक् षट्कर्मलक्षणम् ।
सर्वतन्त्रानुसारेण प्रयोगफलसिद्धिदम् ।। ८ ।।

सबसे पहिले इस (उड्डीशतन्त्र) शास्त्रमें सम्यक् प्रकारसे षट्कर्मोंके लक्षण वर्णन करते हैं, इसके अनुष्ठान करनेसे कार्यसिद्धि होती है ।। ८ ।।

षट्कर्मोंके नाम

शान्तिवश्यस्तम्भनानि विद्वेषोच्चाटने तथा ।
मारणान्तानि शंसन्ति षट् कर्माणि मनीषिणः ।। ९ ।।

शांतिकर्म, वशीकरण, स्तंभन, विद्वेषण, उच्चाटन और मारणको षट्कर्म कहते हैं ।। ९ ।।

षट्कर्मोंके लक्षण

रोगकृत्याग्रहादीनां निरासः शान्तिरीरिता ।
वश्यं जनानां सर्वेषां विधेयत्वमुदीरितम् ।। १० ।।

प्रवृत्तिरोधः सर्वेषां स्तम्भनं समुदाहृतम् ।
स्निग्धानां द्वेषजननं मिथो विद्वेषणं मतम् ।। ११ ।।
उच्चाटनं स्वदेशादेर्भ्रंशनं परिकीर्तितम् ।
प्राणिनां प्राणहरणं मारणं समुदाहृतम् ।। १२ ।।

जिससे रोग, कुकृत्या और ग्रहोंके दोष दूर होते हैं उसे शांतिकर्म कहते हैं। जिससे जीवोंको वशीभूत किया जाता है उसे वशीकरण कहते हैं। १० ।। जिससे जीवोंकी गति रोकी जाती है उसे स्तंभन 'कहते हैं। परस्पर मित्रों में वैर करा देनेको विद्वेषण कहते हैं। ।।११।। जिससे किसीको निज देशसे दूर किया जाय उसको उच्चाटन कहते हैं। जिससे जीवोंके जीवनको नष्ट किया जाय उसे मारण कहते हैं।। १२ ।।

स्वदेवतादिक्कालादीन् ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ।। १३ ।।

उपरोक्त षट्कर्मोंका प्रयोग करनेमें इष्टदेव, काल और दिशा आदिको जानकर प्रवृत्त हो ।। १३ ।।

षट्कर्मोंके देवता

रतिर्वाणी रमा ज्येष्ठा दुर्गा काली यथाक्रमात् ।
षट्कर्मदेवताः प्रोक्ताः कर्मादौ ताः प्रपूजयेत् ।। १४ ।।

रति शांतिकर्मकी, वाणी वशीकरणकी, रमा स्तंभनकी, ज्येष्ठा विद्वेषणकी, दुर्गा उच्चाटनकी और काली मारणकी देवता कही हैं, प्रथम इनका पूजन कर कर्म करना चाहिये ।। १४।।

षट्कर्मोंमें दिशाका नियम

ईशचन्द्रेन्द्रनिर्ऋतिवाय्वग्नीनां दिशो मताः ।
क्रमेण कर्मषट्के वै प्रशस्ताः स्युरिमा दिशः ।। १५ ।।

ईशान दिशा शांतिकर्ममें, उत्तर दिशा वशीकरणमें, पूर्व दिशा स्तंभनमें, नैऋत दिशा विद्वेषणमें, वायुकोण उच्चाटनमें और अग्निकोण मारणकर्ममें कहा है।। १५।।

षट्कर्मोंमें ऋतु कालादिनिर्णय

सूर्योदयात्समारभ्य घटिकादशकं क्रमात् ।
ऋतवः स्युर्वसन्ताद्या अहोरात्रं दिनेदिने ।।
वसन्तग्रीष्मवर्षाश्च शरद्धेमन्तशैशिराः ।। १६ ।।

एक दिन रातके बीच सूर्योदयसे लेकर दश २ घडीके हिसाबसे वसन्तादि छः ऋतुओंको जानो अर्थात् सूर्योदयसे १० घड़ीतक वसन्त, २० घड़ीतक ग्रीष्म, ३० घड़ी तकवर्षा, ४० घड़ी तक शरत, ५० घड़ीतक हेमंत और पचाससे साठ ६० घड़ी तक शिशिरऋतु होती है ।। १६ ।।

हेमन्तः शान्तिके प्रोक्तो वसन्तो वश्यकर्मणि ।
शिशिरः स्तम्भने ज्ञेयो ग्रीष्मे विद्वेष ईरितः ।
प्रावृडुच्चाटने ज्ञेया शरन्मारणकर्मणि ।। १७ ।।

हेमन्तमें शान्तिकर्म, वसन्तमें वशीकरण, शिशिरमें स्तंभन, ग्रीष्ममें विद्वेषण वर्षामें उच्चाटन और शरद् में मारणकर्मको करना चाहिये ।। १७ ।।

षट्कर्मोंमें तिथिवारका नियम

प्रयोगा विधिना कार्यास्तच्च संप्रोच्यतेऽधुना ।
द्वितीया च तृतीया च पञ्चमी सप्तमी तथा ।
बुधेज्यकाव्यसोमाश्च शान्तिकर्मणिकीर्तिताः ।। १८ ।।

शान्तिकर्ममें द्वितीया, तृतीया, पंचमी और सप्तमी तिथि एवं बुध गुरु और सोमवार कहे हैं ।। १८ ।।

गुरुचन्द्रयुता षष्ठी चतुर्थी च त्रयोदशी ।
नवमी पौष्टिके शस्ता चाष्टमी दशमी तथा ।
पुष्टिर्धनजनादीनां वर्द्धनं परिकीर्तितम् ।। १९ ।।

पुष्टिकर्ममें गुरु वा सोमवारी षष्ठी, चतुर्थी, त्रयोदशी नवमी अष्टमी वा दशमी तिथि प्रशस्त है ।। १९ ।।

दशम्येकादशी चैव भानुशुक्रदिने तथा ।
आकर्षणे त्वमावस्या नवमी प्रतिपत्तथा ॥ २० ॥

आकर्षणमें दशमी, एकादशी, अमावास्या, नवमी वा पडवातिथि एवं शुक्र और रविवार कहे हैं ॥ २० ॥

पौर्णमासी मन्दभानुयुक्ता विद्वेषकर्मणि ॥२१॥

शनि वा रविवार युक्त पूर्णिमामें विद्वेषण कार्यको करे ॥ २१ ॥

षष्ठी चतुर्दशी तद्वदष्टमी मन्दवारकः ।
उच्चाटने तिथिः शस्ता प्रदोषे सुविशेषतः ॥ २२ ॥

शनिवारके दिन षष्ठी, चतुर्थी और अष्टमी तिथिमें विशेषकर प्रदोषके समय उच्चाटनका प्रयोग करे ॥ २२ ॥

चतुर्दश्यष्टमी कृष्णा अमावास्या तथैव च ।
मन्दारार्कदिनोपेता शस्ता मारणकर्मणि ॥ २३ ॥

मारणका अनुष्ठान कृष्णपक्षकी चौदश अष्टमी, अमावस तिथि एवं शनि और भौमवारको करे ॥ २३ ॥

बुधचन्द्रदिनोपेता पंचमी दशमी तथा ।
पौर्णमासी च विज्ञेया तिथिः स्तम्भनकर्मणि ॥ २४ ॥

बुध वा सोमवारके दिन पंचमी, दशमी और पूर्णिमा तिथिमें स्तंभनके प्रयोगको करे ॥ २४ ॥

शुभग्रहोदये कुर्यादशुभान्यशुभोदये ।
रौद्रकर्माणि रिक्तार्के मृत्युयोगे च मारणम् ॥ २५ ॥

शुभग्रहोंके उदयमें शान्ति, पुष्टि प्रभृति शुभकर्मोंको करे और अशुभ ग्रहोंके उदयमें मारणादि अशुभकर्मोंको करे। रविवार रिक्ता तिथि में विद्वेषण और उच्चाटनादि क्रूर कर्म एवं मृत्युयोगमें मारणको करे ॥ २५ ॥

षट्कर्मोंके नक्षत्र नियम

स्तम्भनं मोहनं चैव वशीकरणमुत्तमम् ।
१माहेन्द्रे २वारुणे चैव कर्त्तव्यमिह सिद्धिदम् ।। २६ ।।

माहेन्द्र और वारुण मण्डल मध्यगत नक्षत्रोंमें स्तम्भन, मोहन और वशीकरणका अनुष्ठान करनेसे सिद्धि प्राप्त होती है ।। २६ ।।

विद्वेषोच्चाटने वह्निवायुयोगे च कारयेत् ।। २७ ।।

वह्निमंडलगत और वायुमंडलगत नक्षत्रों में विद्वेषण और उच्चाटन कर्म को करे ।। २७ ।।

षट्कर्मोंका कालविशेष कथन

वश्यं पूर्वेऽह्नि मध्याह्ने विद्वेषोच्चाटने तथा ।
शान्तिपुष्टी दिनस्यान्ते संध्याकालेच मारणम् ।। २८ ।।

---

१ ज्येष्ठा चैवोत्तराषाढा चानुराधा च रोहिणी ।
माहेन्द्रमण्डलं ह्येतत्सर्वकर्मप्रसिद्धिदम् ।।

ज्येष्ठा, उत्तराषाढा, अनुराधा और रोहिणी ये चार नक्षत्र माहेन्द्र मण्डल मध्यगत हैं।

२ स्यादुत्तराभाद्रपदा मूलं मूलं शतभिषा तथा ।
पूर्वाभाद्रपदाऽऽश्लेषा ज्ञेया वारुणमध्यगाः ।।

उत्तराभाद्रपद, मूल, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद और आश्लेषा ये पांच नक्षत्र वारुणमंडलगत हैं । ।

३ स्वाती हस्तो मृगशिराश्चित्रा चोत्तरफल्गुनी ।
पुष्यः पुनर्वसुर्वह्निमण्डलस्थाः प्रकीर्तिताः ।।

स्वाती, हस्त, मृगशिर, चित्रा, उत्तराफाल्गुनीं, पुष्य और पुनर्वसु ये सात नक्षत्र अग्निमंडलमध्यगत हैं।

४ अश्विनी भरणी आर्द्रा धनिष्ठा श्रवणे मघा ।
विशाखा कृत्तिका पूर्वाफल्गुनी रेवती तथा ।
वायुमंडलमध्यस्थास्तत्तत्कर्मप्रसिद्धिदाः ।।

अश्विनी, भरणी, आर्द्रा, धनिष्ठा, श्रवण, मघा, विशाखा कृत्तिका पूर्वाफाल्गुनी और रेवती ये १० नक्षत्र वायुमंडलमध्यगत हैं ।

वशीकरण दिनके पूर्वभागमें, विद्वेषण और उच्चाटन मध्यभागमें, शान्ति और पुष्टि शेषभागमें एवं मारणके प्रयोगको प्रदोषकालमें करे ।। २८ ।।

षट्कर्मोंकी लग्ननिरूपण

कुर्याच्च स्तम्भनं कर्म हर्यक्षे वृश्चिकोदये ।
द्वेषोच्चाटादिकं कर्म कुलीरे वा तुलोदये ।। २९ ।।

स्तम्भनकर्म सिंह वा वृश्चिकलग्नमें, विद्वेषण और उच्चाटन कर्म कर्क वा तुलालग्नमें करे ।। २९ ।।

मेषकन्याधनुर्मीने वश्यशान्तिकपौष्टिकम् ।
मारणोच्चाटने चासौ रिपुभेदविनिग्रहे ।। ३० ।।

वशीकरण, शान्ति, पुष्टि, मारण, उच्चाटन और शत्रुनिवारण इत्यादि कर्म मेष, कन्या, धन और मीन लग्नमें करे ।। ३० ।।

षट्कर्मोंके तत्त्वनिरूपण

जलं शान्तिविधौ शस्तं वश्ये वह्निरुदीरितः ।
स्तम्भने पृथिवी शस्ता विद्वेषे व्योम कीर्त्तितम् ।।
उच्चाटने स्मृतो वायुर्भूम्यग्निर्मारणे मतः ।। ३१ ।।

जल तत्त्वके उदयमें शान्तिकर्म, अग्नितत्त्वके उदयमें वशीकरण, पृथ्वी-तत्त्वके उदयमें स्तम्भन, आकाशतत्त्वके उदयमें विद्वेषण, वायुतत्त्वके उदयमें उच्चाटन और पृथ्वी वा अग्नितत्त्वके उदयमें मारणके प्रयोगको करे ।। ३१ ।।

तत्तद्भूतोदये सम्यक्तत्तन्मंडलसंयुतम् ।
तत्तत्कर्म विधातव्यं मन्त्रिणा निश्चितात्मना ।। ३२ ।।

इस भाँतिसे तत्त्वोदयको जान जिस जिस तत्त्वके उदयमें जो जो कार्य करना चाहिये उस उस तत्त्वके उदयमें उस उस कर्मको करे. कार्यके समय सामयिक तत्त्वका मंडल करके अनुष्ठान करना चाहिये ।। ३२ ।।

---

१ तत्त्वोंके जानने और अभ्यास करनेके लिये "शिवस्वरोदय" नामक पुस्तकको देखो ।

षट्कर्मोंके देवताओंका वर्णभेदनिरूपण

वश्ये चाकर्षणे क्षोभे रक्तवर्णं विचिन्तयेत् ।
निर्विषीकरणे शान्तौ पुष्टौ चाप्यायने सितम् ।। ३३ ।।

वशीकरण, आकर्षण और क्षोभण इन तीनों कार्योंके अनुष्ठानमें देवताको लोहित वर्ण शान्ति, विषदूरीकरण और पुष्टिकर्मके प्रयोगमें देवताको शुभ्र-वर्णसे ध्यान करे ।। ३३ ।।

पीतं स्तंभनकार्येषु धूम्रमुच्चाटने स्मृतम् ।
उन्मादे शक्रगोपाभं कृष्णवर्णं तुमारणे ।। ३४ ।।

स्तंभनमें पीतवर्ण, उच्चाटनमें धूम्रवर्ण, उन्मादमें लोहितवर्ण और मारणमें कृष्ण वर्ण देवताका ध्यान करे ।। ३४ ।।

षट्कर्मके देवताओंकी उत्थितादि अवस्थानिरूपण

उत्थितं मारणे ध्यायेत्सुप्तमुच्चाटने प्रभुम् ।
उपविष्टं राक्षसेन्द्र सर्वत्रैव विचिन्तयेत् ।। ३५ ।।

हे रावण ! मारणकर्ममें देवताको उत्थित, उच्चाटनमें निद्रित और अन्य सब कर्मोंमें कर्मके स्वामी देवताका समासीन रूपसे ध्यान करे ।। ३५ ।।

षट्कर्मोंके देवताओंका सात्त्विकादिकर्ममें वर्णविशेषचिन्तन

आसीनं श्वेतरूपं तु सात्त्विके समुदाहृतम् ।
राजसे पीतवर्णं तु रक्तं श्याममुदाहृतम् ।।
यानमार्गस्थितं तूर्णं कृष्णं तामस उच्यते ।। ३६ ।।

सात्त्विक कर्ममें समासीन और शुभ्रवर्ण, राजसकर्ममें पीत, लोहित वा श्यामवर्ण और तामसिककार्यमें सवारीपर चढे जाते और कृष्णवर्णसे देवताका ध्यान करे ।। ३६ ।।

सात्त्विकं मोक्षकामानां राजसं राज्यमिच्छताम् ।
तामसं शत्रुनाशार्थं सर्वं व्याधिनिवारणम् ।
सर्वोपद्रवशान्त्यर्थं तामसं तु विचिन्तयेत् ।। ३७ ।।

मोक्षके अभिलाषी पुरुष सात्त्विक और राज्यकी अभिलाषा करनेवाले राजस कर्मका अनुष्ठान करे। शत्रुके नाशके निमित्त, सम्पूर्ण पीड़ा दूर करने के लिये और सब प्रकारके उपद्रवनिवारणके लिये तामसिक कर्मका अनुष्ठान करना चाहिये ॥ ३७ ॥

मन्त्रके अधिष्ठातृदेवतानिरूपण

रुद्रारताक्ष्यगन्धर्वयक्षरक्षोऽहिकिन्नराः।
पिशाचभूतदैत्येन्द्रसिद्धाः किंपुरुषाः सुराः ॥ ३८ ॥
सर्वेषामपि मंत्राणामेते पञ्चदश स्मृताः॥
केचिदष्टादश प्राहुः समग्राणां नृणां मताः ॥ ३९ ॥

रुद्र, मंगल, गरुड, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, भुजंग, किन्नर, पिशाच, भूत, दैत्य इन्द्र, विद्याधर, और असुर ये पन्द्रह देवता सम्पूर्ण मन्त्रोंके अधिष्ठाता हैं, कोई कोई ऋषि अठारह देवताओंको अधिष्ठाता बताते हैं ॥३८॥ ३९ ॥

मंत्रोंकी वर्णभेदसे संज्ञानिरूपण

कर्त्तरी ह्येकवर्णश्च सूची द्व्यक्षरवर्णकः।
त्र्यक्षरो मुद्गरः प्रोक्तो मुसलश्चतुरक्षरः ॥ ४० ॥
क्रूरः शनिः पञ्चवर्णैः षड्भिर्वर्णैस्तु शृंखलः।
क्रकचः सप्तभिः शूलं चाष्टभिर्नवभिः पविः ॥ ४१ ॥
शक्तिश्च दशभिश्चैकादशभिः परशुः स्मृतः।
चक्रं द्वादशभिर्वर्णैः कुलिशः स्यात्त्रयोदशैः ॥ ४२ ॥
चतुर्द्दशैस्तु नाराचो भुशुण्डी पक्षवर्णकः।
पद्मं षोडशभिर्वर्णैर्मन्त्रच्छेदे तु कर्त्तरी ॥ ४३ ॥
भेदे तु कथिता सूची भञ्जने मुद्गरः स्मृतः।
मुसलं क्षोभणे बंधे शृंखलः क्रकचश्छिदि ॥ ४४ ॥
घाते शूलं पविं स्तंभे शक्तिं बन्धे च कर्मणि।

विद्वेषे परशुं चक्रं सर्वकर्मसु योजयेत् ॥४५॥
उत्सादे कुलिशः स्तंभो नाराचः सैन्यभेदने ।
भुशुण्डी मारणे पद्मं शान्तिपुष्टयादिकर्मणि ॥ ४६ ॥

एक वर्णके मन्त्रको कर्त्तरी, दो अक्षरके मन्त्रको सूची, ३ अक्षरके मंत्रको मुद्‌गर, ४ कक्षरके, मंत्रको मुशल, ५ अक्षरके मन्त्रको क्रूर, षडक्षर मन्त्रको शृंखल, ७ अक्षरके मंत्रको क्रकच, ८ अक्षरके मंत्रको शूल, ९ अक्षरके मंत्रको वज्र, १० अक्षरके मन्त्रको शक्ति, ११ अक्षरके मंत्रको परशु, १२ अक्षरके मन्त्रको चक्र, १३ अक्षर के मन्त्रको कुलिश, १४ अक्षर के मन्त्रको नाराच, १५ अक्षरके मन्त्रको भुशुण्डी, १६ अक्षरके मन्त्रको पद्म कहते हैं । मन्त्रच्छेदमें कर्त्तरी, भेदकर्ममें सूची, भजनमें मुद्‌गर, क्षोभणमें मुशल, बंधनमें शृंखल, विद्वेषणमें परशु, सर्व कर्ममें चक्र, उन्मादमें कुलिश सैन्यभेदमें नाराच, मारणमें भुशुण्डी और शांति पुष्टिप्रभृति कार्योंमें पद्म मन्त्र कहा है ॥ ४०–४६ ॥

कार्यविशेषमें योजना पल्लवादिनिर्णय

पञ्चाशद्वर्णरूपात्मा मातृका परमेश्वरी ।
तत्रोत्पन्ना महाकृत्या त्रैलोक्याभयदायिनी ।
यथाकामं जपः कार्यो मंत्राणामपि मे शृणु ॥ ४७ ॥

पञ्चाशद्वर्णमयी मातृका देवीसे उत्पन्न हुए मंन्त्र त्रिलोकीके भयको दूर करते हैं और मनुष्य जिस मनोरथसे मन्त्रको जपते हैं उसका मनोरथ जपके प्रभावसे सिद्ध होता है ॥ ४७ ॥

मन्त्रादौ योजनं नाम्नः पल्लवः परिकीर्तितः ।
मारणे विश्वसंहारे ग्रहभूतनिवारणे ।
उच्चाटनेषु विद्वेषे पल्लवः परिकीर्तितः ॥ ४८ ॥

जिस मन्त्रके आदिमें नाम हो उसे पल्लव कहते हैं । मारण, संहार, ग्रहभूतादिनिवारण, उच्चाटन और विद्वेषणके प्रयोगमें पल्लवसहित मन्त्रका अनुष्ठान करे ॥ ४८ ॥

मन्त्रान्ते नामसंस्थानं योग इत्यभिधीयते।
शान्तिके पौष्टिके वश्ये प्रायश्चित्तविशोधने ।। ४९ ।।
मोहने दीपने योगं प्रयुञ्जन्ति मनीषिणः ।।
स्तम्भनोच्चाटनोच्छेदविद्वेषेषु स चोच्यते ।। ५० ।।

जिस मंत्र के अन्तमें नाम हो उसे योजन मन्त्र कहते हैं। शान्ति, पुष्टि वशीकरण, प्रायश्चित्त और मोहन दीपन कर्ममें योजनमन्त्र कहा है ।। ४९ ।। इनके अतिरिक्त स्तम्भन और विद्वेषणमें भी योजनमन्त्रको जपना चाहिये ।।५०।।

नाम्न आद्यन्तमध्येषु मन्त्रः स्याद्रोधसंज्ञकः।
मन्त्राभिमुख्यकरणे सर्वव्याधिनिवारणे।
ज्वरग्रहविषाद्यार्त्तिशान्तिकेषु स चोच्यते ।। ५१ ।।

नामके आदि, मध्य और अन्तमें मंत्र रहनेसे उसको रोध कहते हैं। अभिमुखीकरण, सर्वव्याधिनिवारण और ज्वर ग्रह विषादि शान्तिके लिये रोधमंत्रको जपे ।। ५१ ।।

एकैकान्तरितं यत्तु ग्रथनं परिकीर्तितम्।
तच्छान्तिके विधातव्यं नामद्यान्ते यथा मनुः ।। ५२ ।।
तत्सम्पुटं भवेत्तत्तु कीलने परिभाषितम्।
स्तम्भे मृत्युञ्जये हीच्छेद्रक्षादिषु च संपुटम् ।। ५३ ।।

नामके एक एक अक्षरके पीछे मंत्र रहनेसे उसको ग्रथन मंत्र कहते हैं। शान्तिकर्ममें ग्रथन मन्त्रको जपे, नामके प्रथम अनुलोम और अन्तमें विलोम मन्त्र रहनेसे संपुट मन्त्र कहाता है, कीलनकार्यमें इसका प्रयोग करे, यह संपुट मंत्र स्तम्भन मृत्युनिवारण और रक्षादिकर्ममें कहा है ।। ५२ ।। ।।५३ ।।

मन्त्रमादौ वदेत्सर्वं साध्यसंज्ञामनन्तरम्।
विपरीतं पुनश्चान्ते संपुटं तत्स्मृतं बुधैः ।। ५४ ।।

प्रथम सम्पूर्ण मंत्रका उच्चारण करके पीछे साध्यनामका उच्चारण करे और फिर विपरीत भावसे सम्पूर्ण मंत्रका उच्चारण करे इसको तांत्रिक जन सम्पुट मंत्र कहते हैं ।। ५४ ।।

मन्त्रार्णद्वन्द्वमेकैकं साध्यनामाक्षरं क्रमात् ।
कथ्यते सविदर्भस्तु वश्याकर्षणपौष्टिके ।। ५५ ।।

मंत्रके दो दो वर्ण और साध्यनामके दो दो वर्ण क्रमानुसार उच्चारण करनेसे उसको सविदर्भ मंत्र कहते हैं। वशीकरण आर्कषण और पुष्टिकर्ममें उसका प्रयोग करे ।। ५५ ।।

कर्मविशेषमें हुंफट और वौषट् आदिनिरूपण

बन्धनोच्चाटने द्वेषे संकीर्णे हुंपदं जपेत् ।
फट्कारं छेदने हुंफट् रिष्टग्रहनिवारणे ।। ५६ ।।
पुष्टौ चाप्यायने वौषट् बोधने मलिनीकृतौ ।।
अग्निकार्ये जपेत्स्वाहां नमः सर्वत्र चार्च्चने ।। ५७ ।।

बन्धन, उच्चाटन और विद्वेषणमें हुं, छेदनमें फट्, ग्रहजनित अरिष्टशान्तिमें हुँफट्, पुष्टिककर्ममें और शान्ति कर्ममें वौषट्, हवन करनेमें स्वाहा और पूजन करनेमें 'नमः' शब्दका प्रयोग करना चाहिये ।। ५६ ।। ५७ ।।

शान्तिपुष्टिवशद्वेषाकृष्टयुच्चाटनमारणे ।
स्वाहा स्वधा वषट् हुं च वौषट् फट् योजयेत्क्रमात् ।।५८।।

शान्ति और पुष्टि कर्ममें स्वाहा, वशीकरणमें स्वधा, विद्वेषणमें वषट्, आकर्षणमें हुं, उच्चाटनमें वौषट् और मारणमें फट् शब्दका प्रयोग करे ।।५८।।

वश्याकर्षणसन्तापज्वरे स्वाहां प्रकीर्त्तयेत् ।
क्रोधोपशमने शान्तौ प्रीतौ योज्यं नमो बुधैः ।। ५९ ।।

वशीकरण, आकर्षण और ज्वरके सन्तापको दूर करनेके लिये स्वाहा-शब्दका प्रयोग करे। तांत्रिक जन कहते हैं कि, नमःशब्दका क्रोधशांति, शान्ति-कर्म और प्रीतिवर्द्धन कर्ममें प्रयोग करे ।। ६९ ।।

वौषट् संमोहनोद्दीपपुष्टिमृत्युञ्जयेषु च ।
हुंकारं प्रीतिनाशे च छेदने मारणे तथा ।। ६० ।।

मोहन, उद्दीपन, पुष्टि और मृत्युनिवारणमें वौषट्का प्रयोग करे। प्रीतिभञ्जन,छेदन और मारणके प्रयोग में 'हुं' इस बीज मन्त्रका प्रयोग करे ।।६०

उच्चाटने च विद्वेषे वौषट् चान्धीकृतौ वषट् ।
मंत्रोद्दीपनकार्येषु लाभालाभ वषट् स्मृतम् ।। ६१ ।।

उच्चाटन और विद्वेषणमें वौषट्, अन्धीकरणमें वषट्, मन्त्रके चैतन्य करने और लाभ हानिके कर्ममें वषट् मन्त्रका प्रयोग करे ।। ६१ ।।

मंत्रोंके स्त्रीपुंनपुंसकादिनिरूपण

स्त्रीपुंनपुंसकत्वेन त्रिधा स्युर्मन्त्रजातयः ।
स्त्रीमन्त्रा वह्निजायांता नमोऽन्ताश्च नपुंसकाः ।। ६२।।
हुंफट् पुमांस इत्युक्ता वश्यशान्त्यभिचारके ।
क्षुद्रक्रियाद्युपध्वंसे स्त्रियोऽन्यत्र नपुंसकाः ।। ६३ ।।

स्त्री, पुरुष और नपुंसक इन तीन प्रकारके सम्पूर्ण मन्त्र होते हैं। जिन मन्त्रोंके अन्तमें स्वाहा हो उनको स्त्रीसंज्ञक, जिनके शेषमें नमः शब्द हो उनको नपुंसक और जिनके अन्तमें हुँफट् हो उन मन्त्रोंको पुरुष संज्ञक जानो ।। ६२ । पुरुषसंज्ञक मन्त्र वशीकरण शांति और अभिचारकर्ममें, स्त्रीमन्त्र क्षुद्र क्रि दिके नाशमें और नपुंसक मन्त्र अन्य कर्मों में प्रयुक्त करना चाहिये ।। ६३ ।

तारांत्याग्निविषप्रायो मन्त्र आग्नेय उच्यते ।
सौम्यश्च मनवः प्रोक्ता भूयिष्ठेन्द्वमृताक्षराः ।। ६४ ।।

जिस मन्त्रके अंतमें ॐ हो उसको आग्नेय कहते हैं। जिस मन्त्र में इन्दु और अमृताक्षर विद्यमान हो उसको सौम्य मन्त्र कहते हैं ।। ६४ ।।

आग्नेयमंत्राः सौम्याः स्युः प्रायशोऽन्ते नमोऽन्विताः ।
मंत्रः शान्तोऽपि रौद्रत्वं हुं फट् पल्लवितो यदि ।। ६५ ।।

यदि आग्नेय मन्त्रके अन्तमें नमः शब्द हो तो उसे सौम्य मन्त्र कहते हैं, यदि सौम्य मन्त्र फट्से पल्लवित हो तो उसको भी आग्नेय मन्त्र कहते हैं ।। ६५ ।।

सूप्तः प्रबुध्यमानोऽपि मन्त्रः सिद्धि न गच्छति ।। ६६ ।।

सुप्त मन्त्रकी कभी सिद्धि नहीं होती है ।। ६६ ।।

स्वापकालो वामवाहो जागरो दक्षिणावहः ।
स्वापकाले तु मन्त्रस्य जपो न च फलप्रदः ।। ६७ ।।

जिस समय वामनासिकासे श्वास निकलता हो उस समय मन्त्रकी निद्रावस्था और जब दक्षिणनासिकासे श्वास निकले तब मन्त्रकी जाग्रत अवस्था जाननी चाहिये। निद्रावस्थामें मन्त्रका जप करनेसे निष्फल होता है ।। ६७ ।।

आग्नेयाः संप्रबुध्यन्ते प्राणे चरति दक्षिणे ।
वामे चरति सौम्याश्च प्रबुद्धा मन्त्रिणां सदा ।। ६८ ।।

दक्षिण नासिकामें श्वास बहने के समय आग्नेय मन्त्र प्रबुद्ध होता है और वामनासिकामें श्वास बहनेके समय सौम्य मन्त्र प्रबुद्ध होता है ।। ६८ ।।

नाडीद्वयगते प्राणे सर्वे बोधं प्रयान्ति च ।
प्रयच्छन्ति फलं सर्वे प्रबुद्धा मन्त्रिणां सदा ।। ६९ ।।

दोनों नासिकामें श्वास बहनेके समय सभी मन्त्र प्रबुद्ध होते हैं। प्रबुद्ध मन्त्रके जपनेसे निश्चय सिद्धि प्राप्त होती है ।। ६९ ।।

षट्कर्मोंके आसननिरूपण

आसनानि प्रवक्ष्यामि कर्मणां विहितान्यपि ।
पद्मासनं पौष्टिके तु शान्तिके स्वस्तिकासनम् ।। ७० ।।

अब षट्कर्मों के आसनोंको कहता हूँ—प[१]द्मासन बांधकर पुष्टि कर्म और

१–"वामोरूपरि दक्षिणं हि चरण संस्थाप्य वामं तथा
दक्षोरूपरि पश्चिमेन विधिना धृत्वा कराभ्यां दृढम् ।
अंगुष्ठे हृदये निधाय चिबुकं नासाग्रमालोकये-
देतद्व्याधिविनाशनाशनकरं पद्मासनं चोच्यते ।।"

दाहिना चरण बांये ऊरुपर और वाम चरण दाहिने ऊरुपर रख पीठकी ओर दोनों हाथ करके दाहिने हाथसे दाहिने चरणके अंगूठेको और बांये हाथसे बांये चरणके अंगूठेको पकड़ हृदयमें ठोड़ी लगाकर नेत्रोंसे नासिकाका अग्रभाग अवलोकन करे (देखे) इसको पद्मासन कहते हैं। इसके द्वारा रोग नष्ट होते है और उदरकी अग्नि प्रदप्ति होती है।

स्वस्तिकासन बांधकर शांतिकर्म करो ॥ ७० ॥

आकृष्टे पौष्टिके तद्वद्विद्वेषे कुक्कुटासनम् ।
अर्द्धस्वस्तिकमुच्चाटे अर्द्धस्थापनपार्ष्णिकम् ॥ ७१ ॥

'कुक्कुटासन' द्वारा आकर्षण, पुष्टिकर्म और विद्वेषणकर्म करे । और अर्द्धस्वस्तिकासनसे उच्चाटनके प्रयोगको करे ॥ ७१ ॥

मारणे स्तंभने तद्वद्विकटं परिकीर्त्तितम् ।
वश्ये भद्रासनं तेषां कथ्यते चाथ भावना ॥ ७२ ॥

मारण और स्तंभनके प्रयोगमें विकटासन कहा है । वशीकरणके प्रयोगको भद्रासन द्वारा करे ॥ ७२ ॥

१–" जानूवोरन्तरे सम्यक् धृत्वा पादतले उभे ।
समकायं सुखासीनं स्वस्तिकं तु प्रचक्षते ॥"

दोनों जंघाके अन्तरमें दोनों चरणोंकोरख समकाय सुखसे बैठनेको स्वस्तिकासन कहते हैं ।

२–" पद्मासनं समासाद्य जानूर्वोरन्तरे करौ ।
कूर्पराभ्यां समासीनो मञ्चस्थ: कुक्कुटासनम् ॥ "

मंचस्थ होकर पद्मासन लगाये दोनों जंधाओंके ऊरुओंके बीच दोनों हाथ डाल दोनों हाथोंसे दोनों चरणोंके अंगूठेको पकड़े । इसे कुक्कुटासन कहते हैं

३ केवल दाहिने जांघमें बाँये हाथको कर पैरके अंगूठेको पकड़े, इसे अर्द्ध स्वस्तिकासन कहते हैं ।

३–" जानुजङ्घोन्तरालेषु भुजयुग्मं प्रवेशयेत् ।
विकटासनमेतत्स्यादुपविष्टं प्रचक्ष्यते ॥ "

जानु और जंघाओंके बीच दोनों हाथोंको डालकर बैठनेको विकटासन कहते है ।

४–" गुल्फौ च वृषणस्याधो व्युत्क्रमेण समास्थित: ।
पादांगुष्टे कराभ्यां च धृत्वां च पृष्ठदेशत: ॥
जालन्धरं समासाद्य नासाग्रमवलोकयेत् ॥
भद्रासनं भवेदेतत्सर्वव्याधिविनाशकम् ॥ "

कोषके नीचे दोनों गुल्फोंको विपरीतभावसे रख पीठकी ओर दोनों हाथोंसे दोनों पैरोंके अँगूठोंको पकड़ जालन्धर बंध करके नासिकाके अग्रभागको देखे, इसको भद्रासन कहते हैं । इस आसनके अभ्याससे सम्पूर्ण रोग नष्ट हो जाते हैं !

वश्ये मेषासनं प्रोक्तमाकृष्टौ व्याघ्रचर्म च ।
उष्ट्रासनं तथोच्चाटे विद्वेषे तुरगासनम् ।। ७३ ।।

मेषके चर्मपर आसन लगाकर वशीकरण कर्मकरे और व्याघ्रके चर्मपर आकर्षण कर्म करे, ऊंटके चर्मपर उच्चाटन कर्म करे और घोडेके चर्मपर आसन लगाकर विद्वेषण कर्म करे ।। ७३ ।।

मारणे माहिषं चर्म मोक्षे गजाजिनं भवेत् ।
अथवा कम्बलं रक्तं सर्वकर्मसु कारयेत् ।। ७४ ।।

महिषके चर्मपर आसन लगाकर मारण करे, गजचर्मपर आसन लगाकर मोक्षका साधन करे और रक्त कम्बलके आसनपर बैठकर समस्त कार्य किये जा सकते हैं ।। ७५ ।।

षण्मुद्रानिरूपण

षण्मुद्राः क्रमशो ज्ञेयाः पद्मपाशगदाह्वयाः ।
मुसलाशनिखड्गाख्याः शांतिकादिषु कर्मसु ।। ७५ ।।

पद्ममुद्राके योगमें शांतिकर्म, पाशमुद्राके योगमें वशीकरण, गदामुद्राके योगमें स्तंभन, मुसलमुद्राके योगमें विद्वेषण, वज्रमुद्राके योगमें उच्चाटन और खड्गमुद्राके योगमें मारणका अनुष्ठान करे । जिस जिस कर्ममें जिस जिस मुद्राका उल्लेख है उस उस मुद्राके योगमें वही कार्य करनेसे सिद्धि प्राप्त होती है ।। ७५ ।।

षट्कर्मोंका देवध्याननिरूपण

शांतिपौष्टिकवश्येषु सौन्दर्यातिशयान्विताः ।
सर्वाभरणसंदीप्ताः प्राप्तकालमनोरथाः ।।
ध्यातव्या देवताः सम्यक् सुप्रसन्नाननाम्बुजाः ।। ७६ ।।
आकर्षणेऽपि तद्वच्च बडिशैरिव मत्स्यकान् ।
साध्यमाकर्षणे द्वेषे भर्त्स्यमानं जनैरिव ।। ७७ ।।
बध्यमानो जनैर्दण्डैर्दारितस्तस्करो यथा ।
उलूको वा यथाऽरिष्टैर्मन्तव्योच्चाटने रिपुः ।। ७८ ।।

यत्किञ्चिच्छवमारुह्य सन्दष्टोष्टपुटः क्रुधा ।
कर्म कुर्यात्ततो मन्त्री यथा क्रूरेषु कर्मसु ।। ७९ ।।

षट्कर्मोंके साधनमें किस कार्यमें किस भावसे देवताका ध्यान करे उसे कहते हैं :—शान्ति, पुष्टि, वशीकरण और आकर्षण इन चारों कर्मोंके अनुष्ठानमें देवताको अतिसुन्दरी, समस्त आभूषणोंसे भूषित, नवीन यौवनसम्पन्न और प्रसन्नमुखीका ध्यान करे ।। ७६ ।। काँटेसे जैसे मछली खैंच ली जाती है उसी प्रकार आकर्षणके प्रयोगसे इच्छित मनुष्यको खैंच लिया जाता है ।। ७७ ।। जब शत्रुके ऊपर उच्चाटन प्रयोग सिद्ध करना हो तो ध्यान करे कि वह बांधा जा रहा है, चोरकी तरह मारा जाता है, अथवा दिनमें उल्लूपक्षीको जैसे कौवे दुःख देते हैं ऐसा दुःख उसको दिया जा रहा है ।। ७८ ।। किसी भी मुर्देके ऊपर चढ़के क्रोधसे होठोंको काटता हुआसा सभी मारणादि क्रूर कर्मोंमें प्रयोग करे ।।७९।।

षट्कर्मोंका कुंडनिर्णय

विद्वेषे चाभिचारे च त्रिकोणं कुंडमिष्यते ।
द्विमेखलं कोणमुखं हस्तमात्रं तु सर्वतः ।। ८० ।।
उच्चाटनं तु नैर्ऋत्यां शत्रुपक्षस्य कारयेत् ।
उत्सादनं तु वायव्यां देवानामपि कारयेत् ।। ८१ ।।

विद्वेषणके प्रयोगमें त्रिकोण कुण्डको बनावे, इस कुंडको दो मेखलासे युक्त एक हाथका बनावे, नैर्ऋतकोणमें कुंडका मुख करे । शत्रुके उच्चाटनमें नैर्ऋतकोणमें और देवोच्चाटनमें मंडलके वायुकोणमें कुंड बनावे ।। ८० ।। ८१ ।।

शत्रूणां तापने शस्तं योन्याख्यमग्निकोणगम् ।
अर्द्धचन्द्रं तु याम्यायांशत्रूणां मारणे स्थितम् ।। ८२ ।।

योनिकुंडमें शत्रुतापनकर्मका प्रयोग करे और मण्डलके अग्निकोणमें इस कुंडको बनावे । शत्रुमारणके अनुष्ठानमें अर्द्धचन्द्र कुंडको मंडलके दक्षिण कोणमें बनावे ।। ८२ ।।

त्रिकोणं नैर्ऋते कुंडं रिपूणां व्याधिवर्द्धनम् ।।
दाहायाग्नौ च विद्वेषे कुंडं पूर्णेन्दुसन्निभम् ।।८३ ।।

शत्रुकी पीड़ा बढ़ानेमें त्रिकोणकुंडको मंडलके नैर्ऋतकोणमें बनावे, विद्वेषणमें पूर्णचन्द्रके समान मण्डलके अग्निकोणमें कुंड बनावे ।। ८३ ।।

कर्त्तव्यं चतुरस्रं वा द्वेषादौ तु विचक्षणैः ।
कुंडं सुलक्षणं कृत्वा तत्र कर्माणि साधयेत् ।। ८४ ।।

तान्त्रिक जन चतुरस्र कुंड भी विद्वेणमें बनाते हैं और सुंदर लक्षणोंसे युक्त करके कार्यका अनुष्ठान करते हैं ।। ८४ ।।

चतुरस्रे भवेद्वश्यमाकर्षणं त्रिकोणके ।
कर्षणस्तम्भने वत्स विद्वेषं च त्रिकोणके ।
अथैवोच्चाटनं प्रोक्तं षट्कोणे मारणं स्मृतम् ।। ८५ ।।

चतुरस्र कुंडमें वशीकरण, त्रिकोण कुंडमें आकर्षण, स्तम्भन और उच्चाटन एवं षट्कोण कुंडमें मारणके प्रयोगका अनुष्ठान करे ।। ८५ ।।

षट्कर्मोंकी प्रधानताका निरूपण

वश्यात्स्तम्भनमुत्कृष्टं स्तम्भनान्मोहनं महत् ।।
मोहनाद्द्वेषणं श्रेष्ठं द्वेषादुच्चाटनं वरम् ।। ८६ ।।

वशीकरणसे स्तम्भन श्रेष्ठ है स्तम्भनसे मोहन श्रेष्ठ, मोहनसे विद्वेषण श्रेष्ठ और विद्वेषणसे उच्चाटन श्रेष्ठ है ।। ८६ ।।

उच्चाटनादपि महन्मारणं सर्वतो महत् ।
मारणादधिकं कर्म न भूतं न भविष्यति ।। ८७ ।।

उच्चाटनसे मारण कर्म श्रेष्ठ है, अतएव षट्कर्मोंमें सबसे श्रेष्ठ मारण माना है । मारणसे श्रेष्ठ आजतक कोई कर्म अन्य नहीं हुआ और न होगा ।। ८७ ।।

षट्कर्मोंमें कुंभस्थापन

शांतिके स्वर्णकुंभं च नवरत्नैर्विभूषितम् ।
तदभावे रौप्यकुंभं ताम्रं वापि सुलक्षणम् ।। ८८ ।।

शांतिकर्ममें नवरत्नोंसे विभूषित सुवर्णके कलशको स्थापित करे, सोनेके कलशके अभाव में चाँदीके कलशको और चाँदीके कलशके अभावमें सुलक्षणोंसे युक्त ताँवेके कलशको स्थापित करे ॥ ८८ ॥

अभिचारे लौहकुंभं स्थापयेत्सुसमाहितः ।
उत्सादे काचकुंभं च मोहने रैत्यकुंभकम् ॥ ८९ ॥

अभिचार कर्ममें लोहेके कुम्भको, उत्सादनकर्ममें काचके कुंभको और मोहनमें पीतलके कुंभको स्थापित करे ॥ ८९ ॥

उच्चाटने च मृत्कुंभं कालमंडलसंस्थितम् ॥
सर्वकर्माणि वा कुर्यात्कुंभं ताम्रमयं तथा ॥ ९० ॥

उच्चाटनके अनुष्ठानमें मिट्टीके कलशको स्थापित करे, वाकी सब कार्योंमें ताँवेके कलशको स्थापित करे ॥ ९० ॥

कुंभमें पूजनका नियम

तत्कुंभं चाथ संस्थाप्य रुद्रं देवीं च पूजयेत् ।
उपचारक्रमेणैव देवं ध्यायेद्यथाविधि ॥ ९१ ॥
शूलहस्तं महारौद्रं सर्ववैरिनिषूदनम् ।
पूर्णचन्द्रसमाभासं रुद्रं वृषभवाहनम् ॥ ९२ ॥

विधिपूर्वक कलशको स्थापित कर अनेक प्रकारके उपचारोंसे रुद्र और भद्रकाली देवीकी पूजा करे और रुद्रका इस भाँतिसे ध्यान करे कि रुद्रदेव सम्पूर्ण शत्रुओंके नाशक, महारौद्र मूर्तिको धारे, पूर्णचंद्रमाके समान कांतिमान् शूलको हाथ में लिये बैलपर सवार हैं। इस भाँतिसे ध्यान करके उनकी पूजा करे ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

अथवाऽन्यप्रकारेण ध्यानं कुर्यात्समाहितः ।
काश्मीरस्फटिकप्रभं त्रिनयनं पञ्चाननं शूलिनं
खट्वांगासिवरप्रसादडमरूचक्राब्जबीजाभयम् ॥
बिभ्राणं दशदोर्भिरिक्षजटिलं वीरासने संस्थितं ॥
गौरीश्रीसहितं सदैवमखिलंध्यायेच्छिवंचर्मिणम् ॥ ९३ ॥

रुद्रमंत्रेण कुर्याच्च ह्यु पचारान्पृथग्विधान् ।। ९४ ।।
भद्रकालीं च संपूज्य नैवेद्यैश्च पृथग्विधैः ।
पट्टवस्त्रैरलङ्कारैर्बलिदानैः पृथग्विधैः ।। ९५ ।।

अथवा इस भाँतिसे ध्यान करे कि–कश्मीरी स्फटिकके समान शरीरकी कांति है, तीन नेत्र, पाँच मुख और दश हाथ हैं प्रत्येक हाथमें शूल, खट्वाङ्ग, असि, वरमुद्रा, प्रसादमुद्रा, डमरू, चक्र, पद्म, बीज और अभयमुद्रा विराजमान हैं, शिरपर जटाओंका जाल धारण किये वीर आसनसे बैठे हैं और उनके एक ओर गौरी और दूसरी ओर लक्ष्मीदेवी विराज रही हैं । इस प्रकार शिवजीका ध्यान करके " ॐ त्र्यंबकंयजामहेसुगंविपुष्टिवर्द्धनम् । उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।" इस रुद्रमन्त्रसे पूजन करे । अनन्तर पृथक् नैवेद्यादि उपचारसे भद्रकालीकी पूजा करे । इन देवदेवीकी पूजामें रेशमी वस्त्र, आभूषण और बलिदानादि सम्पूर्ण उपचार पृथक पृथक् विधानसे दे ।।९३ ।। –९५ ।।

यत्र न स्यादुपायोऽन्यः शत्रोर्भयनिवृत्तये ।
तदाऽनन्यगतित्वेन मारणादीनि कारयेत् ।। ९६ ।।

जहाँपर शत्रुभय दूर करनेका कोई अन्य उपाय न हो वहाँ पर मारण कर्मका अनुष्ठान करे ।। ९६ ।।

दीपादग्निं समानीय धूपाद्वा चान्त्यजादपि ।
विद्वेषणाभिचारे च क्रव्यादांशं न संत्यजेत् ।। ९७ ।।

शत्रुके घरकी दीप अग्नि वा धूप अग्निको लाकर उससे अभिचार कर्मको करे, विद्वेषणादि अभिचारके होममें क्रव्याद अंशको न त्यागे ।। ९७ ।।

अत्र चैव विधायाग्निं परिस्तीर्य शरैस्तृणैः ।
विभीतकपरिध्या च कल्पयेद्यस्य मारणम् ।। ९८ ।।
जुहुयान्निम्बतैलाक्तैः काकौलूकैश्च पिच्छकैः ।
दारयैनं शोषयैनं मारयेत्यभिधाय च ।
अष्टोत्तरशतेनैव मनसा जुहुयादृचा ।। ९९ ।।

विधानसे अग्निको स्थापित कर शरतृणसे अग्निका परिस्तरण करे, फिर नीमके तेलमें भिगोकर कौवा और उल्लू पक्षीके पंखोंसे होम करे। जिसके मारनेकेलिये अनुष्ठानकिया जाय उसीके उद्देशसे "एनं दारय एनं शोषय एनं मारय" इस प्रकार कहता हुआ मानसिक मन्त्रसे एक सौ आठ बार हवनकी आहुति दे ।। ९८ ।। ९९ ।।

होमान्ते विधिवत्कृत्यामाराध्याग्नेश्च सन्निधौ ।
यो मे च कंटकं दूराद्दूरं वा चान्तिकेऽपि च ।
पिब हृद्यमसृक् तस्य इत्युक्त्वा च निवेदयेत् ।। १०० ।।

होमके अन्तमें अग्निके समीप कृत्या देवीका पूजन करके "दूरमें वा समीपमें मेरा जो कोई शत्रु है उसके मांसको भक्षण करो" यह कहकर निवेदन करना चाहिये ।। १०० ।।

संरक्ष्याग्निं विधानेन नवरात्रैः समापयेत् ।
मृतस्तिष्ठति ज्ञात्वैवं तामदस्य रिपोर्मृतिः ।। १०१ ।।

इस नियमसे निरंतर अग्निकी रक्षा करता हुआ नौ रात्रितक जप होम करने पर अनुष्ठानके पूर्ण होनेतक ही शत्रुकी मृत्यु हो जाती है ।। १०१ ।।

वसनं लोहितं प्रोक्तमुष्णीषं लोहितं स्मृतम् ।
संकल्प्य जपहोमादौ तदाचरणमारभेत् ।। १०२ ।।

मारणके प्रयोगमें लाल वस्त्र और पगडी आदि लाल धारण करे और जप होमके पहले संकल्प करके कार्य करना चाहिये ।। १०२ ।।

षट्कर्मोंकी मालाका निर्णय

प्रवालवज्रमणिभिर्वश्यपौष्टिक योर्जपेत् ।
मत्तेभदन्तमणिभिर्ज्जपेदाकृष्टिकर्म्मणि ।। १०३ ।।

मूंगोंकी मालासे, हीरोंकी मालासे वा मणियोंकी मालासे वशीकरण और पुष्टिकर्ममें जप करे, मदमाते हाथीके दांतकी मालासे आकर्षण में जप करे ।। १०३ ।।

साध्यकेशसूत्रयुक्तैस्तुरंगदशनोद्भवैः ।
अक्षैर्मालां परिष्कृत्य विद्वेषोच्चाटने जपेत् ।। १०४ ।।

विद्वेष्य और उच्चाटनीय मनुष्यके केशोंसे घोड़ेके दाँतोंकी माला गूंथकर विद्वेषण और उच्चाटनमें जप करे ।। १०४ ।।

मृतस्य युद्धशून्यस्य दशनैर्गर्द्दभस्य च ।
कृत्वाऽक्षमालां जप्तव्यं शत्रुमारणमिच्छता ।। १०५ ।।

विना युद्धके मरे हुए मनुष्यके दाँतोंकी वा गधेके दाँतोंकी माला बनाकर उससे मारणके प्रयोगमें जप करे ।। १०५ ।।

क्रियते शंखमणिभिर्धर्मकामार्थसिद्धये ।
पद्माक्षैः प्रजपेन्मंत्रं सर्वकामार्थसिद्धये ।। १०६ ।।

शंख और मणियोंकी मालासे धर्मार्थ सिद्धिके लिये जपकरे और कमलगट्टोंकी मालासे सब कार्योंकी सिद्धिके लिये जप करे ।। १० ६ ।।

रुद्राक्षमालया जप्तो मन्त्रः सर्वफलप्रदः ।
स्फाटिकी मौक्तिकी वापि रौद्राक्षी वा प्रवालजा ।
सारस्वताप्तये शस्ता पुत्रजीवैस्तथाप्तये ।। १०७ ।।

रुद्राक्षकी मालासे जप करनेपर सब फल प्राप्त होते हैं। विद्याभिलाषी मनुष्य स्फटिककी माला, मोतियोंकी माला, रुद्राक्षकी माला मूंगोंकी माला और जियापोतेकी मालासे जप करे ।। १०७ ।।

पद्मसूत्रकृता रज्जुः शस्ता शान्तिकपौष्टिके ।
आकृष्टयुच्चाटयोर्वाजिपुच्छवालसमुद्भवा ।।१०८ ।।

शान्ति और पुष्टिकर्ममें पद्मसूत्रमय डोरेसे माला गूंथे, आकर्षण और उच्चाटनमें घोड़ेकी पूंछके बालोंसे माला गूंथे ।। १०८ ।।

नरस्नायुविशेषैस्तु मारणे रज्जुरुत्तमा ।
अन्यासां चाक्षमालानां रज्जुः कार्पासिकी मता ।।१०९।।

मारणमें मनुष्यकी नसोंसे माला गूंथे और अन्य कर्मोंमें कपासके डोरेसे माला गूंथनी चाहिये ।। १०० ।।

सप्तविंशतिसंख्याकैः कृता मुक्ति प्रयच्छति ।
अक्षैस्तु पंचदशभिरभिचारफलप्रदा ।। ११० ।।

मुक्तिकी इच्छा करनेवाले २७ दानोंकी मालासे जप करे और अभिचार कर्ममें १५ दानोंकी माला फल देती है ।। ११० ।।

अक्षमाला विनिर्दिष्टा तत्रादौ तत्त्वदर्शिभिः ।
अष्टोत्तरशतेनैव सर्वकर्मसु पूजिता ।। १११ ।।

सम्पूर्ण तांत्रिक कर्मोंमें तत्त्वके जाननेवालोंने १०८ दानोंकी मालासे जप करना कहा है ।। १११ ।।

जपांगुलीनियम

शान्त्यादिस्तंभवश्येषु वृद्धाग्रेण च चालयेत् ।
अंगुष्ठानामिकाभ्यां तु जपेदाकर्षणे मनुम् ।। ११२ ।।
अंगुष्ठतर्जनीभ्यां तु विद्वेषोच्चाटयोर्जपेत् ।
कनिष्ठांगुष्ठयोगेन मारणे जप ईरितः ।। ११३ ।।

शान्ति, पुष्टि, स्तम्भन और वशीकरणमें अंगूठेके अग्रभागसे माला चलावे, अंगूठे और अनामिका अंगुलीसे आकर्षणमें माला चलावे ।। ११२ ।। अंगूठे और तर्जनी अंगुलीसे विद्वेषणमें माला चलावे और अंगूठे एवं कनिष्ठिका अंगुलीसे मारणमें जप करे ।। ११३ ।।

जप करनेमें दिशाओंका नियम

जपेत्पूर्वमुखो वश्ये दक्षिणां चाभिचारके ।।
आयुष्यरक्षाशान्ति च पुष्टिं वापि करिष्यति ।। ११४।।

वशीकरणमें पूर्वको मुख करके जप करे, अभिचार (मारणादि) कर्ममें दक्षिणको मुख करके जपे, धनकी लालसासे पश्चिमको मुख करके और आयुकी रक्षाके निमित्त, शांतिकर्ममें एवं पुष्टिकर्ममें उत्तरको मुख करके जपे ।। ११४।।

जपके लक्षण

यः श्रूयतेऽन्यै स तुवाचिकः स्यादुपांशुसंज्ञो निजदेहवेद्यः ।
निष्कंपदन्तौष्ठमथाक्षराणांयच्चिन्तनं स्यादिहमानसाख्यः।।

जप तीन प्रकारके होते हैं—वाचिक, उपांशु और मानसिक। जप करते समय यदि मन्त्रको दूसरा मनुष्य सुन सके तो उसे वाचिक कहते हैं जपते समय मन्त्र अपनेको ही सुन पड़े उसे उपांशु कहते हैं और जपते समय होठ एवं जीभ न चले मन ही मनमें ध्यान करता हुआ जप करे तो उसको मानसिक कहते हैं ॥ ११५ ॥

षट्कर्मोंके जपका नियम

पराभिचारे किल वाचिकः स्या-
दुपांशुरुक्तोऽप्यथ शान्तिपुष्टौ ।
मोक्षेषु जापः किल मानसाख्यः
संज्ञा त्रिधा पापनुदे तथोक्ता ॥ ११६ ॥

अभिचार (मारणादि) कर्ममें वाचिक जप, शांति और पुष्टिकर्ममें उपांशु जप, एवं मोक्षकी साधनामें मानसिक जप करना चाहिये ॥ ११६ ॥

१—जपमें विशेष नियम यह है कि विना सेतुके जप न करे, कालिकापुराणमें लिखा है—

"शास्त्राणां प्रणवः सेतुर्मंत्राणां प्रणवः स्मृतः ।
स्रवत्यनोंकृतः पूर्वं परस्ताच्च विशीर्यते ॥
निःसेतुसलिलं यद्वत्क्षणान्निम्नं प्रगच्छति ।
मंत्रस्तथैव निःसेतुः क्षणात्क्षरति यज्वनाम् ॥
चतुर्दशः स्वरो योऽसौ सेतुरोंकारसंज्ञकः ।
स चानुस्वारनादाभ्यां शूद्राणां सेतुरुच्यते ॥

सब प्रकारके मन्त्रोंका 'प्रणव' सेतु है। यदि ओंकाररूपी सेतु जपके आदिमें न हो तो वह जप पतित हो जाता है और—अन्तमें सेतुके न रहनेसे मंत्र विशीर्ण हो जाता है। अतएव जपके आदिमें और अन्तमें सेतुको जपे। जैसे विना सेतुके (पुलके) जल नीचे चला जाता है उसी भाँति सेतुशून्य मंत्र भी विफल होता है। स्वरवर्णके १४ चौदहवें अक्षरमें नादविन्दु मिलानेसे "औं" बीज होता है, इसको शूद्रोंका सेतु कहते हैं।

षट्कर्मोंके होमकुंडकी दिशाका नियम

शांतिके पौष्टिके चैव होमः स्याद्योग्यसाधनैः ।
कार्यं प्राग्वदनेनाथ सौम्येन वदनेन वा ।। ११७ ।।

शांति और पुष्टिकर्ममें पूर्वको मुख वा उत्तरको मुख करके होमादि करे ।।११७।।

आकृष्टौ वायुकुण्डे च कौबेरदिङ्मुखेन तु ।
नैर्ऋतीदिङ्मुखस्तस्मिन्कुण्डे विद्वेषणे हुनेत् ।। ११८ ।।

आकर्षणके प्रयोगमें उत्तरको मुख करके वायुकोणस्थ कुंडमें हवन करे। विद्वेषणमें नैर्ऋतको मुख करके वायुकोणस्थ कुण्डमें हवन करे ।। ११८ ।।

आग्नेयीदिङ्मुखस्त्वेतत्कुण्डे मारुतकेऽपि वा ।
उच्चाटने हुनेन्मंत्री मारणे याम्यदिङ्मुखः ।।
जुहुयाद्याम्यकुण्डे तु मंत्री तत्साधनैस्ततः ।। ११९ ।।

उच्चाटनमें अग्निकोणको मुख करके वायुकोणस्थ कुण्डमें हवन करे। और मारणमें दक्षिणको मुख करके दक्षिणदिग्वर्ती कुंडमें हवन करे ।। ११९ ।।

वज्रलाञ्छितकुण्डे वा ग्रहभूतनिवारणे ।।
वायव्यदिङ्मुखो वश्ये कुण्डे योन्याकृतौ हुनेत् ।
वज्रलाञ्छितकुण्डे वा स्तम्भेप्राग्वदनो हुनेत् ।। १२० ।।

ग्रहभूतादिके निवारणमें षट्कोण कुंडमें वायुकोणको मुख करके और वशीकरणमें त्रिकोण कुण्डमें हवन करे। स्तंभनके प्रयोगमें भी पूर्वको मुख करके षट्कोण कुण्डमें हवन करना चाहिये ।। १२० ।।

षट्कर्मोंके हवनमें द्रव्योंका निरूपण

द्रव्याण्यथ प्रवक्ष्यामि तत्तत्कर्मानुसारतः ।
शांतिके तु पयः सर्पिस्तिलाः क्षीरद्रुमेण वा ।
अमृताख्या लता चैव पायसं तत्र कीर्तितम् ।। १२१ ।।

दूध, घी, पीपलादि वृक्षके पत्ते और गिलोयसे शांतिकर्ममें हवन करे ।।१२१।

पौष्टिके तु प्रवक्ष्यामि होमद्रव्याण्यतः परम् ।
बिल्वपत्रैस्तथाऽऽज्यैः स्याज्जातीपुष्पैस्तथैव च ।।१२२।।

बेलपत्र, घी, और चमेलीके फूलोंसे पुष्टिकर्ममें हवन करे ।। १२२ ।।

कन्यार्थी जुहुयाल्लाजैः श्रीकामः कमलैस्तथा ।
दध्ना च श्रियमाप्नोति चान्नैश्चान्नं घृतप्लुतैः ।।
समृद्धौ जुहुयान्मंत्री महादारिद्र्यशान्तये ।।१२३।।

कन्याकी अभिलाषासे खीलोंद्वारा, स्त्रीकी अभिलाषासे कमलद्वारा ओर महासमृद्धिकी इच्छासे दरिद्रके दूर करने के लिये दही और घीसे होम करे ।। ।।१२३।।

लक्षहोमाल्लभेच्छान्ति घृतबिल्वतिलैर्निधिम् ।।

घृत, बिल्व और तिलसे एक लक्ष हवन करनेपर महानिधि प्राप्त होती है ।।

"आकर्षणे च हवनं प्रियंगु बिल्वकं फलम् ।
जातीपलाशकुसुमैः सैन्धवैस्त्र्यहमेव च" ।। १२४ ।।

(प्रियंगु, बेल, चमेलीके फूल, पलाशके फूल और सेंधानमकसे आकर्षणमें हवन करे) ।। १२४ ।।

राजिकालवणैर्वापि वश्ये वा पौष्टिकादिषु ।
वश्यार्थो जातिकुसुमैराकृष्टौ करवीरजैः ।। १२५ ।।

सफेद सरसों और लवणसे पुष्टिकर्ममें, चमेलीके फूलोंसे वशीकरणमें और कनेरके फूलोंसे आकर्षणमें हवन करे ।। १२५ ।।

कार्पासनिम्बैस्तक्राक्तैः साध्यकेशैरथापि वा ।
उच्चाटने काकपक्षैरथवा मोहने पुनः ।। १२६ ।।

उच्चाटनीय मनुष्य के केशोंसे वा कपासके बीज और नीमके बीज मठ्ठेमें मिलाकर उससे उच्चाटनकर्ममें और कौवेके परोंसे मोहनकर्ममें हवन करे।१२६।

उन्मत्तबीजैर्जुहुयाद्विषरक्तेन मारणम् ।। १२७ ।।

धतूरेके बीज और रक्तमिश्रित विषसे मारणमें हवन करे ।। १२७ ।।

अजापयस्तथा सर्पिः कार्पासास्थि नृणामपि ।
तन्मांसं चापि साध्यस्य नखलोमगणैरपि ।।
एकीकृत्य हुनेन्मन्त्री शत्रुमारणकांक्षया ।।१२८।।

बकरीका दूध, घी, कपासके बीज, मनुष्यकी हड्डी, मनुष्यका मांस और जिसको मारे उस मनुष्य के नाखून और रोमोंको मिलाकर मारणकी इच्छासे मनुष्य हवन करे ।। १२८ ।।

जुहुयात्सार्षपैस्तैलैरथवा शत्रुमारणे ।। १२९ ।।

अथवा सरसों के तेलसे मारणकर्ममें हवन करे ।। १२९ ।।

रोहीबीजैस्तिलैर्यवैरुत्सादे जुहुयाद्यवैः ।। १३० ।।

रोहितकबीज, तिल और जौसे उत्सादनकर्ममें हवन करे ।। १३० ।।

तुषकण्टकसंयुक्तैर्बीजैः कार्पासिकैरपि ।
सर्षपैर्लवणाक्तैश्च हुनेत्सर्वाभिचारके ।। १३१ ।।

तुषयुक्त कपासके बीज, सरसों और लवणसे अभिचारकर्ममें हवन करे ।।१३१

काकोलूकच्छदैः क्रूरैः कारस्करविभीतकैः ।
मरीचैः सर्षपैः सिक्थैरर्कक्षीरैः कटुत्रयैः ।।
कटुतैलैः स्नुहीक्षीरैः कुर्यान्मारणकर्मणि ।। १३२ ।।

काक और उल्लूआदि क्रूरपक्षीके पर, कुचिला, विभीतकमिर्च, सरसों, सिक्थ, आकंका दूध, सोंठ मिर्च, पीपल, कटु, तैल और सेहुंडके दूधके मारण कर्ममें हवन करे ।। १३२ ।।

आयुष्कामे घृततिलैर्दूर्वाभिराम्रपर्णकैः ।। १३३ ।।

घी, तिल, दूर्वा और आमके पत्तोंसे आयुवर्द्धन कर्ममें हवन करे ।। १३३ ।।

प्रयुक्तैराम्रपर्णैश्च ज्वरं सद्यो विनाशयेत् ।
गुडूच्या मृत्युजयने तथा शान्तौ गजाश्वयोः ।। १३४ ।।

आमके पत्तोंसे हवन किया जाय तो शीघ्र ज्वर दूर हो जाता है । मृत्युको जीतनेके लिये एवं घोड़ा और हाथीकी शान्तिके लिये गिलोयसे हवन करे ।। १३४

गौरैस्तु सर्षपैर्हुत्वा सद्यो रोगं हरेद्गवाम् ।
वृष्टिकामोवैतसीभिः समिद्भिः पत्रकैस्तथा ।। १३६ ।।

सफेद सरसोंद्वारा हवन करे तो गौओंकी पीडा शीघ्र नष्ट हो जाती है। वर्षाकी इच्छासे बेंतकी समिधि और बेंतके पत्तोंद्वारा हवन करे ।। १३५ ।।

हुत्वा पुष्टिमवाप्नोति पुत्रजीवैस्तु पुत्रकम् ।
घृतगुग्गुलहोमेन वाक्पतित्वं प्रजायते ।। १३६ ।।

जीवपुत्रिकाकी समिधोंद्वारा हवन करनेसे पुष्टिलाभ होता है। घी और गूगलद्वारा होम करनेसे वाक्पति होता है ।। १३६ ।।

पुन्नागमल्लिकाजातीनागविद्रुमसम्भवैः ।
पुष्पैः सरस्वतीसिद्धिस्तथा सर्वार्थसाधनम् ।। १३७ ।।

पुन्नागके पुष्प, मल्लिकापुष्प, जातीपुष्प, नागकेशरके फूल और मूंगाके द्वारा हवन करनेसे सरस्वती सिद्ध होती है ।। १३७ ।।

पयसा लवणैर्वापि हुनेद् वृष्टिनिवारणे ।। १३८ ।।

दूध और लवणद्वारा हवन करनेसे वृष्टि रुक जाती है ।।१३८।।

वह्निकी जिह्वाका निरूपण

पद्मरागासुवर्णाख्या तृतीया भद्रलोहिता ।
लोहिताऽनन्तरं श्वेता धूमिनी च करालिका ।।
राजस्यो रसना वह्नेर्विहिताः काम्यकर्मसु ।। १३९ ।।

पद्मरागा, सुवर्णा, भद्रलोहिता, लोहिता, श्वेता, घूमिनी और करालिकाको अग्निकी राजसी जिह्वा कहते हैं, काम्यकर्ममें इनकी आवश्यकता है ।। १३९ ।।

विश्वमूर्तिस्फुलिङ्गिन्यौ धूम्रवर्णा मनोजवा ।
लोहिताख्या करालाख्या काली तामस्य ईरिताः ।
एताः सप्त नियुञ्जन्ति क्रूरकर्मसु मन्त्रिणः ।।१४०।।

विश्वमूर्त्ति, स्फुलिङ्गिनी, धूम्रवर्णा, मनोजवा, लोहिता कराला और काली इन सात अग्निकी जिह्वाओंको तामसी कहते हैं, मारणादि क्रूरकर्मसे इनकी आवश्यकता होती है ।। १४० ।।

हिरण्या गगना रक्ता कृष्णाऽन्या सुप्रभा मता ।
बहुरूपाऽतिरक्ता च सात्त्विक्योयोगकर्मसु ॥ १४१ ॥

हिरण्या, गगना, रक्ता, कृष्णा, सुप्रभा, बहुरूपा और अतिरक्ता इन अग्निकी जिह्वाओंको सात्विकी जिह्वा कहते हैं, योगकर्ममें इनकी आवश्यकता होती है ॥ १४१ ॥

स्वस्वनामसमाभाः स्युर्जिह्वाः कनकरेतसः ॥ १४२ ॥

इन सब जिह्वाओंका वर्ण जिह्वाओंके नामके अनुसार स्थिर करना चाहिये ॥ १४१ ॥

संन्यस्या रुद्रभागे द्रुतकनकनिभाऽऽकर्षणादौ हिरण्या
वैदूर्य्या पूर्वभागे प्रभवति गगना स्तम्भनादौ रसज्ञा ॥
रक्ता बालार्कवर्णा हुतवहविदिशि द्वेषणादौ प्रशस्ता
कृष्णानीलाम्बुजाभादिशि दनुजपतेर्मारणे सुप्रशस्ता ॥१४३
वारुण्यां सुप्रभाख्या प्रभवति रसना शान्तिके शोणवर्णा
हेमाभा चातिरक्ता पवनदिशि गतोच्चाटने संप्रशस्ता ॥
मध्ये कुंडस्य चान्ते प्रभवति बहुरूपा यथार्थाभिमाना
एता जिह्वाः प्रयोज्या विविधविधिषु यत्कोविदैस्तंत्रविद्भिः

ईशानकोणमें अग्निकी सुवर्णवर्णा हिरण्यनाम्नी जो जिह्वा है, आकर्षण कर्ममें उसकी आवश्यकता होती है । पूर्वमें नीलकांतमणिके समान नीली जो अग्निकी जिह्वा है, स्तम्भनादि कर्ममें उसकी आवश्यकता होती है । अग्निकोणमें बाल सूर्यके समान वर्णवाली रक्ता नाम्नी जो अग्निकी जिह्वा है, विद्वेषण कर्ममें उसका प्रयोजन होता है । नैर्ऋतकोणमें नीलपद्मके समान रंगवाली कृष्णानाम्नी एक जिह्वा है, वह मारणकर्ममें प्रशस्त है । पश्चिममें लोहित वर्णवाली सुप्रभानाम्नी अग्निकी जिह्वा शान्तिकर्ममें प्रशस्त हैं । वायुकोणमें सुवर्णके समान वर्णवाली अतिरक्तानाम्नी जो अग्निकी जिह्वा है वह उच्चाटन-कर्ममें कही है । इसके अतिरिक्त बीचमें बहुरूपानाम्नी जो जिह्वा है उस जिह्वामें हवन करने से अर्थसिद्धि होत[illegible] ४ ॥

वह्निके नामनिरूपण

पूर्णाहुत्यां मृडो नाम शान्तिके वरदस्तथा ।
पौष्टिके बलदश्चैव क्रोधोऽग्निश्चाभिचारके ।। १४५ ।।
वश्यार्थे कामदो नाम वरदाने च चूडकः ।
लक्षहोमे वह्निनामा कोटिहोमे हुताशनः ।। १४६ ।।

किस कर्ममें अग्निके किस नामको उच्चारण कर हवन करना चाहिये यहाँ उसको कहते हैं:—पूर्णाहुतिमें अग्निके मृडनामको शान्तिकर्ममें अग्निके वरदनामको, पुष्टिकर्ममें अग्निके बलद नामको अभिचारकर्ममें अग्निके क्रोध नामको वशीकरणमें अग्निके कामदनामको, वरदानमें अग्निके चूडक नामको लक्षसंख्याके हवनमें अग्निके वह्निनामको और कोटि संख्यक हवनमें अग्निके हुताशननामको उच्चारण करके कार्य करना चाहिये ।। १४५।। १४६ ।।

होमकी व्यवस्था

द्रव्याशक्तौ घृतं होमे त्वशक्तौ सर्वतो जपेत् ।
मूलमंत्राद्दशांशः स्यादंगादीनां जपक्रिया ।। १४७ ।।

यदि हवनके द्रव्यका अभाव हो तो केवल घीसे होम करे, उसमें भी अशक्त हो तो जप मात्र करे । मूल देवताका मन्त्र जितना जपे अंगदेवताका मन्त्र उसका दशांश जपना चाहिये ।। १४७ ।।

अशक्तावुक्तहोमस्य जपस्तु द्विगुणो मतः ।।१४८।।
येषां जपे च होमे च संख्या नोक्ता मनीषिभिः ।
तेषामष्टसहस्राणि संख्योक्ता जपहोमयोः ।।१४९।।

जो घीसे हवन करनेमें भी असमर्थ हो तो होमकी संख्याकादूना जप करदे ।। १४८ ।। जिस जिस स्थानमें जप और होम की संख्या न कही हो वहाँ आठ हजार जप और और आठही हजार संख्यामें हवन करे ।। १४९ ।।

स्वाहान्तेनैव मंत्रेण कुर्याद्धोमं बलिं तथा ।
नमोऽन्तेन नमस्कारमर्चनं च समाचरेत् ।। १५० ।।

हवनमें और बलप्रदानमें मन्त्रके अंतमें स्वाहाशब्दका प्रयोग करे पूजाके समय और नमस्कारके समय मन्त्रके अन्तमें 'नमः' शब्दका प्रयोग करे ॥१५०॥

मन्त्रान्ते नाम संयोज्य तर्पयामीति तर्पणम् ।
संख्यानुक्तौ जपे होमे चाष्टोत्तरसहस्रकम् ॥ १५१ ॥

तर्पणके समय देवताका नाम लेकर तर्पयामि मन्त्र के अन्तमें कहे । जिस स्थानमें जप और हवनकी संख्या न हो उस स्थानमें एक हजार आठ संख्यासे जप और हवन करे ॥ १५१ ॥

स्रुक्स्रुवनियम

षट्त्रिंशदंगुला स्रुक् स्याच्चतुर्विंशांगुलः स्रुवः ।
मुखं कण्ठं तथा वेदीं सप्त चैकाष्टभिः क्रमात् ॥ १५२ ॥

स्रुक् ३६ अंगुलीकी बराबर और स्रुव २४ अंगुलीकी बराबर बनावे । उनका ७ अंगुलका मुख, १ अंगुलका कण्ठ और ८ अंगुलकी वेदी बनावे ॥ १५२ ॥

आयामानाहतो दण्डो विंशतिश्च षडङ्गुलः ॥ १५३ ॥

दण्डकी लम्बाई और विस्तार क्रम से २० और ६ अंगुलकी रक्खे॥१५३॥

वेदरामांगुलैः कुण्डो गर्त्तो हि चतुरंगुलः ।
खातं वेदांगुलैर्वृत्तमंगुलत्रितयं खनेत् ॥ १५४ ॥

स्रुक् और स्रुव इन दोनोंके कुण्डलका भाग ४ अंगुल वा तीन अंगुल रखकर उसमें चतुरस्र गर्त्त करे, गर्त, अंगुलभर अगहर और वर्तुलाकार होना चाहिए ॥ १५४ ॥

मेखला द्व्यंगुला तद्वच्छोभाशेषं विचिन्तयेत् ।
वेदित्र्यंशेन विस्तारं कुर्यात्कुण्डमुखाग्रयोः ॥ १५५ ॥

गर्त्तके बाहर दो अंगुल मेखला और उसके बाहर शोम बनावे कुण्डमुख और कुण्डके आगेका भाग वेदीका तिहरा हो ॥ १५५ ॥

कनिष्ठाग्रमितं रन्ध्रं स्रुचो घृतविनिर्गमे ॥ १५६ ॥

स्रुक् और स्रुवके अग्रभागमें घी निकलनेके लिये कनिष्ठिका अंगुलीके अगाडीके बराबर छेद करना चाहिये ॥ १५६ ॥

सुवर्णरूप्यताम्रैर्वा स्रुक्स्रुवौ दारुजावपि ।
आयसीयौ स्रुक्स्रुवौ वा कारस्करमयावपि ।। १५७ ।।

सोनेका, चाँदीका, तांबेका, लोहेका वा [1]काष्ठका स्रुक् और स्रुव बनावे ।। १५७ ।।

नागेन्द्रलतयोर्विद्यात्क्षुद्रकर्मणि संस्थिते ।। १५८ ।।

छोटे कामोंमें नाग्रेन्द्रलताका स्रुक् स्रुव बनावे ।। १५८ ।।

होमकी मुद्रावर्णन

न देवाः प्रतिगृह्णन्ति मुद्राहीनां यथाऽऽहुतिम् ।
मुद्रयैवेति होतव्यं मुद्रहीनं न भोक्ष्यति ।। १५९ ।।

विना मुद्राकी हवनमें आहुति देनेसे देवता उसको नहीं ग्रहण करते हैं, अतएव मुद्राके साथ हवन करना चाहिये ।। १५९।।

मुद्राहीनं च यो मोहाद्धोममिच्छति मन्दधीः ।
यजमानं स चात्मानं पातयेत्तेन निश्चितम् ।। १६० ।।

जो दुर्बुद्धि मोहवश विना मुद्राके हवन करता है तो वह अपनेको और यजमानको पतित करता है ।। १६० ।।

तिस्रो मुद्राः स्मृता होमे मृगी हंसी च शूकरी ।
शूकरी करसंकोची हंसी मुक्तकनिष्ठिका ।।
मृगी कनिष्ठातर्जन्योर्होमसमुद्रेयमीरिता ।। १६१ ।।

हवनमें तीन मुद्राओंको करना चाहिये । मृगी, हंसी और शूकरी, हाथ के सकोड़नेमें शूकरी मुद्रा, कनिष्ठाको छोड़ और अंगुलियोंमें हंसी मुद्रा और कनिष्ठा एवं तर्जनी अंगुलियों में मृगी मुद्रा होती है ।। १६१ ।।

१–"चन्दनं खदिराश्वत्थप्लक्षचूतविकङ्कताः ।
चम्पामलकसारश्च पलाशश्चेत्ति दारवः ।। "

काठका स्रुक् और स्रुव बनाना हो तो चन्दन, खैर, पीपल, पाकड, आम विकंकत, चम्पा, आमलकी और पलाश इन वृक्षोंकी लकडीमेंसे किसीका स्रुक और स्रुव बनावे ।

आभिचारिककार्येषु शूकरी परिकीर्त्तिता ॥१६२॥

आभिचारिक कर्मोंमें शूकरी मुद्रा कही गई है ॥ १५२ ॥

नमःस्वाहावषट्वौषट्हुंफडन्ताश्च जातयः ।

शान्तौ वश्ये तथा स्तम्भे विद्वेषोच्चाटमारणे ॥ १६३ ॥

शान्तिकर्ममें नमः शब्द, वशीकरणमें स्वाहा, स्तम्भनमें वषट्, विद्वेषणमें वौषट्, उच्चाटनमें । हुं और मारणमें फूट् शब्दका मन्त्र के अन्तमें प्रयोग करके हवन करना चाहिये ॥ १६३ ॥

अथ शान्तिकर्म

ज्वरादिशान्ति

ॐ शान्ते शान्ते सर्वारिष्टनाशिनि स्वाहा ॥

एकलक्षजपेनापि सर्वशान्तिर्भवेद् ध्रुवम् ॥ १६४ ॥

ॐ शान्ते शान्ते सर्वारिष्टनाशिनि स्वाहा' इस मन्त्रका एक लाख जप करनेसे ज्वरादि सबरोग दूर हो जाते हैं[1] ॥ १६४ ॥

कुकृत्याशान्ति

"ॐ संसांसिंसींसुंसूंसेंसैंसोंसौंसंसः वंवांविंवींवुंवूंवेंवैंवोंवौं वंवः हंसः अमृतवर्च्चसे स्वाहा ।" इति मन्त्रः ॥

अनेन मन्त्रेण उदकशरावं अष्टोत्तरशताभिमन्त्रितं पिबेत्, प्रातरुत्थाय सर्वव्याधिरहितः संवत्सरेण भविष्यति ॥ १६५

एक नये शरावेमें जल भरकर उक्त मन्त्रसे उस जलको एक सौ आठ बार अभिमन्त्रित कर प्रातः पिये । इससे सब प्रकारके रोग दूर होते हैं, किसी दुष्ट-पुरुषका किया हुआ प्रयोगका असर नहीं होता एवं कुकृत्या दूर हो जाती है ॥ १६५॥

---

१ पूर्वोक्त रीतिसे पूजाविधि, होमविधि आदि करके मन्त्र जपना चाहिय समस्त कर्मोंमें यही नियम जाने ।

विविध आपच्छान्ति

" ॐहंहांहिंहींहुंहूंहेंहैंहोंहौंहंहः क्षंक्षांक्षिंक्षींक्षुं
क्षूंक्षेंक्षैंक्षोंक्षौंक्षंक्षः हंसः हम् ।" इति मंत्रः ।।

मंत्रेणानेन दुष्टस्य चरितं संप्रणश्यति ।
स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं विषमेव च ।।
भूतप्रेतपिशाचाश्च राक्षसा दुष्टचेतसः ।।१६६।।
नराश्च व्याघ्रसिंहाद्या भल्लुका जम्बुकास्तथा ।
नागा गजा हयाश्चैव सर्वे पशव एव च ।।१६७।।
नश्यन्ति स्मृतिमात्रेण ये केचिद्भूतविग्रहाः ।
सर्वे ते प्रलयं यान्ति मन्त्रस्यास्य प्रभावतः ।।१६८।।

उपरोक्त मंत्र के स्मरण वा जप करनेसे सब प्रकारकी आपत्ति और विपत्ति दूर हो जाती है । इस मंत्रके प्रभावसे स्थावर, जंगम और कृत्रिम विष दूर होते हैं । और भूत, प्रेत, पिशाच, राक्षस, दुष्ट नर, व्याघ्र, सिंह, रीछ' श्रृगाल, नाग, हाथी एवं घोडेसे जनित पीड़ा नष्ट हो जाती है । ।। १६६-१६८।।

ईश्वरादिक्रोधशान्ति

"ॐ शान्ते प्रशान्ते सर्वक्रोधोपशमनि स्वाहा ।"
अनेन मंत्रेण त्रिः सप्तधा जप्तेन मुखं मार्जयेत् ।। १६९ ।।

इस मंत्र से २१ बार जलको अभिमंत्रित कर मुख धोनेसे सब भाँतिके क्रोधकी शांति होती है ।। १६९ ।।

वशीकरण

अथाग्रे संप्रवक्ष्यामि वशीकरणमुत्तमम् ।
राजप्रजापशूनां च शृणु रावण यत्नतः ।। १७० ।।

शिवजी बोले-अब उत्तम वशीकरणको कहता हूँ—जिसके प्रयोगसे राजा प्रजा और पशु वशमें हो जाते हैं, हे राक्षसराज ! इसको सावधानीसे सुनो।।१७०

सर्वजनवशीकरण

प्रियंगु तगरं कुष्ठं चंदनं नागकेशरम् ।
कृष्णधत्तूरपंचांगं समभागं तु कारयेत् ।। १७१ ।।
छायायां वटिका कार्या प्रदेयाऽन्नपानयोः ।।
पुरुषो वाथ नारी च यावज्जीवं वशो भवेत् ।।
त्रिसप्ताहं मंत्रयेत्तां मंत्रेणानेन मंत्रवित् ।। १७२ ।।
मंत्रस्तु—ॐ "नमो भगवते उड्डामरेश्वराय ।
मोहय मोहय मिलि मिलि ठः ठः ।।"
एक चित्तस्थितो मन्त्री जपेन्मन्त्रमतंद्रितः ।।
त्रिंशत्सहस्रसंख्याकं सर्वलोकवशंकरम् ।। १७३ ।।

कांगनी, तगर, कूठ, चन्दन, नागकेशर, काले धतूरेका पंचांग इन सबको समान ले गोली बनाय छायामें सुखावे फिर इन गोलियोंको खाने पीनेके साथ जिस पुरुष वा स्त्रीको मूलमें लिखे मंत्रसे ७ बार अभिमंत्रित करदेती वह जन्मभरतक वशी भूत रहे और जो मनुष्य एकाग्र मनसे मंत्र तीस हजार जपे तो सब जनोंको वशीभूत करता है।। १७१–१७३ ।।

पुष्येपुनर्नवामूलं करे सप्ताभिमंत्रितम् ।
बद्ध्वा सर्वत्र पूज्यः स्यात्सर्वलोकवशंकरः ।। १७४ ।।
मंत्रस्तु—ॐ नमः सर्वलोकवशंकराय कुरु कुरु स्वाहा ।।

पुष्यनक्षत्रमें पुनर्नवाकी जडको लाकर सातवार मन्त्र से अभिमन्त्रित कर हाथ में बाँधनेसे सर्वत्र पूजित होकर सबको वशीभूत करता है। (मन्त्र मूलमें लिखा है) ।। १४७ ।।

बिल्वपत्राणि संगृह्य मातुलुंगं तथैव च ।
अजादुग्धेन संपिष्य तिलकं लोकवश्यकृत् ।। १७५ ।।

बेलपत्र वा मातुलुङ्गके पत्तोंको बकरीके दूधमें पीस तिलक लगानेसे सब लोगोंको वशीभूत करता है।। १७५ ।।

राजवशीकरण

कुंकुमं चन्दनं चैव रोचनं शशिमिश्रितम् ।
गवां क्षीरेण तिलकं राजवश्यकरं परम् ।
मन्त्र :–"ॐ ह्रीं सः अमुकं मे वशमानय स्वाहा ।।
पूर्वमेव सहस्रं जप्त्वाऽनेन मन्त्रेण सप्ताभिमन्त्रितं
तिलकं कार्यम् ।। १७६ ।।

मूलमें लिखे मन्त्रको प्रथम एक हजार जपकर सिद्ध कर ले, पीछे केशर, चंदन गोरोचन, भीमसेनी कपूर इनको गौके दूधमें घोटकर मन्त्र से अभिमन्त्रित कर तिलक लगानेसे राजा वशीभूत होता है ।। १७४ ।।

स्त्रीवशीकरण

अथातः संप्रवक्ष्यामि योगानां सारमुत्तमम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण नारी भवति किंकरी ।। १ ७७ ।।

अब प्रयोगों के उत्तम सारको कहता हूँ, जिसके साधनसे नारी दासीके समान वशीभूत हो जाती है ।। १७७ ।।

मन्त्रः–"ॐ नमः कामाख्यादेवि अमुकी मे वशमानय-
स्वाहा" ।। अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।। १७८ ।।

उपरोक्त मन्त्र नारीवशीकरणका है। पहले १९८ वार जपकर सिद्ध कर ले, पीछे नारीवशीकरणमें प्रवृत हो ।। १७८ ।।

ब्रह्मदंडी चिताभस्म यस्या अङ्गे क्षिपेन्नरः ।
वशीभवति सा नारी नान्यथा शंकरोदितम् ।। १७९ ।।

ब्रह्मदण्डी और चिताकी भस्म लेकर जिस स्त्री के अंगपर मन्त्रसे अभिमंत्रित करके डाला जाय वह निःसंदेह वशीभूत हो जाती है। महादेवजी कहते हैं यह मेरा वचन कभी मिथ्या नहीं हो सकता है ।। १७९ ।।

कृष्णोत्पलं मधुकरस्य च पक्षयुग्मं
मूलं तथा तगरजं सितकाकजंघा ।

यस्याः शिरोगतमिदं विहितं विचूर्ण
दासी भवेज्झटिति सा तरुणी विचित्रम् ।। १८० ।।

कालें कमल, भ्रमरके दोनों पंख , तगरकी जड़, सफेद काकाजंघा इनका चूर्ण कर मन्त्र से अभिमंत्रित करके जिस स्त्रीके शिरपर डाले वह स्त्री दासीके समान वशीभूत हो जाती है ।। १८० ।।

सिंधूत्थमाक्षिककपोतमलांश्च पिष्ट्वा
लिंगं विलिप्य तरुणीं रमते नवोढाम् ।
साऽन्यं न याति पुरुषं मनसापि नूनं
दासी भवेदतिमनोहरदिव्यमूर्तिः ।। १८१ ।।

सेंधानमक, शहद और कबूतरकी बीटको पीस जो मनुष्य अपनी कामध्वजापर लेपकर स्त्रीसे रमण करता है वह स्त्री फिर दूसरेके समीप जानेका मनमें भी इच्छा नहीं करती और सदा दासी बनकर उस मनोहर पुरुषके वशमें रहती है ।। १८१ ।।

पतिवशीकरण

रोचनं मत्स्यपित्तं च मयूरस्य शिखां तथा ।
मधुसर्पिःसमायुक्तं स्त्रीवराङ्गे तु लेपयेत् ।
निभृते मैथुने भावे पतिर्दासो भविष्यति ।। १८२ ।।

गोरोचन, मछलीका पित्त वा मोरकी चोटीको शहत और घी में मिलाय स्त्री अपनी योनिमें लेपकर रति करे तो मैथुन समयमें पति दासके समान हो जायगा ।। १८२ ।।

कुलत्थं बिल्वपत्रं च रोचना च मनःशिला ।
एतानि समभागानि स्थापयेत्ताम्रभाजने ।
सप्तरात्रस्थिते पात्रे तैलमेवं पचेत्ततः ।। १८३ ।।
तैलेन भगमालिप्य भर्त्तारमनुगच्छति ।
संप्राप्ते मैथुने भर्त्ता दासो भवति नान्यथा ।। १८४ ।।

कुलथी, बेलपत्र, गोरोचन और मनशिलको समान लेकर तांबेके पात्र में सात रात्रितक तेलमें पचावे, फिर उस तेलको योनिमें लगाये स्वामीके साथ रमण करे तो उसका स्वामी दासके समान हो जाता है ।। १८३ ।। १८४ ।।

स्तम्भन

आसनस्तम्भन

"ॐ नमो दिगम्बराय अमुकासनस्तम्भनं कुरु स्वाहा ।।" इति मंत्रः ।। अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।

श्वेतगुञ्जाफलं क्षिप्तं नृकपाले तु मृत्तिकाम् ।
बलिं दत्त्वा तु दुग्धस्य तस्य वृक्षो भवेद्यदा ।। १८५ ।।
तस्य शाखा लता ग्राह्या यस्याग्रे तां विनिक्षिपेत् ।
तस्य स्थाने भवेत्स्तंभः सिद्धियोग उदाहृतः ।। १८६ ।।

आसनस्तंभित करनेमें पहले 'ॐ नमो दिगम्बराय, इत्यादि मन्त्र को एक सौ आठ बार जप कर सिद्ध कर ले, पीछे कार्य करे। मनुष्य की खोपड़ी में मट्टी भर उसमें सफेद घुंघुची के बीज बो दे और उसको प्रतिदिन दूधसे सींचे, बीज से वृक्ष के उत्पन्न होने पर वृक्षको उखाड़कर जिसके सामने फेंके तो उसका आसन स्तम्भित हो जाता है, फिर वह मनुष्य उठकर अन्य स्थानपर नहीं जा सकता है ।। १८५ ।। १८६ ।।

अग्निस्तम्भन

"ॐ नमो अग्निरूपाय मम शरीरे स्तम्भनं कुरु कुरु । स्वाहा ।।" इति मंत्रः ।। अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।

वसां गृहीत्वा माण्डूकीं कौमारीरसपेषिताम् ।
लेपमात्रे शरीराणामग्निस्तम्भः प्रजायते ।। १८७ ।।

अग्निको स्तंभित करनेमें पहले १०८ बार उपरोक्त मन्त्रको जपकर सिद्ध करले, पीछे कार्य करे। मेंढ़ककी चर्बीको घीगुवारके रससे पीसकर शरीरमें लगानेसे अग्नि स्तंभित हो जाती है, अर्थात् उसके शरीरको आग नहीं जला सकती है ।। १८७ ।।

आज्यं शर्करया पीत्वा चर्वयित्वा च नागरम् ।
तप्तलोहं मुखे क्षिप्तं क्वचिद् वक्त्रं न दह्यते ।। १८८ ।।

घृत और शक्करको पीकर, सोंठको चावे, पीछे यदि उसके मुखमें जलती आग रखी जाय तो भी मुख नहीं जल सकता है ।। १८८ ।।

शस्त्रस्तम्भन-मन्त्र

"ॐ अहो कुम्भकर्ण महाराक्षस कैकसीगर्भसम्भूत परसैन्यस्तम्भन महाभगवान् रुद्रोऽर्पयति स्वाहा ।।"
अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।

खर्ज्जूरी मुखमध्यस्था, कटिबद्धा च केतकी ।
भुजदंडे स्थिते चार्के सर्वशस्त्रनिवारणम् ।। १८९ ।।

उपरोक्त '-ॐ अहो कुंभकर्ण' इत्यादि मन्त्रको विधिपूर्वक १०८ बार जपकर सिद्ध कर ले पीछे कार्य करे । मुखमें खजूरी और कटि देशमें केतकी एवं भुजामें आकको धारण करनेसे सब शस्त्र स्तंभित हो जाते हैं ।। १८९।।

गृहीत्वा रविवारे तु बिल्वपत्रं च कोमलम् ।
पिष्ट्वा बिससमं सद्यः शस्त्रस्तंभस्तु लेपनात् ।। १९० ।।

रविवारके दिन कोमल बेलपत्रीको लेकर सिवारके साथ पीस शरीरमें लगानेसे सम्पूर्ण शस्त्र स्तंभित हो जाते हैं ।। १९० ।।

सैन्यस्तंभन मन्त्र

"ॐ नमः काल रात्रि त्रिशूलधारिणि मम शत्रुसैन्य-स्तंभनं कुरु कुरु स्वाहा ।।" अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः।।

रविवारे तु गृह्णीयाच्छ्वेतगुंजाफलं सुधीः ।
निखनेच्च श्मशाने वै पाषाणं तत्र धापयेत् ।। १९१ ।।
अष्टौ च योगिनीः पूज्या रौद्री माहेश्वरी तथा ।
वाराही नारसिंही च वैष्णवी च कुमारिका ।। १९२ ।।
लक्ष्मीर्ब्राह्मी च संपूज्या गणेशो बटुकस्तथा ।

क्षेत्रपालः सदा पूज्यः सेनास्तंभो भविष्यति ।। १९३ ।।
पृथक् पृथक् बलिं दत्त्वा दशनामविभागतः ।
मांसं मद्यं तथा पुष्पं धूपं दीपावलीक्रिया ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं यान्यथा शङ्करोदितम् ।। १९४ ।।

उपरोक्त 'ॐ नमः कालरात्रि' इत्यादि मन्त्रका १०८ –बार जप करके सिद्ध कर ले, सेनास्तम्भनके कार्यको करे । रविवारके दिन सफेद घुंघुचीके फल लाकर श्मशानमें गाड़े ऊपर पत्थर रख रौद्री , माहेश्वरी, वाराही , नारसिंही, वैष्णवी कौमारी, महालक्ष्मी और ब्राह्मीं इन आठों योगिनियों की पूजा करे । एवं गणेश, बटुक और क्षेत्रपालकी पृथक् पृथक् पूजा करके बलि दे । मांस और मद्यद्वारा पूजा करनेसे शत्रुकी सेना स्तंभित हो जाती है । इस क्रियाको साधारण मनुष्योंके निकट प्रकाश न करे, महादेवजीने ऐसी ही कहा है ।। १९१ ।। १९४।।

सैन्यविमुखीकरण

"ॐ नमो भयङ्कराय खड्गधारिणे मम शत्रुसैन्य-
पलायनं कुरुकुरु स्वाहा ।।" अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।
भौमवारे गृहीत्वा तु काकोलूकौ तु पक्षिणौ ।
भूर्जपत्रे लिखेन्मन्त्रं तस्य नामसमन्वितम् ।। १९५ ।।
गोरोचने गले बद्ध्वा काकोलूकस्य पक्षिणः ।
सेनानी सम्मुखं गच्छेन्नान्यथा शङ्करोदितम् ।।१९६।।
शब्दमात्रे सैन्यमध्ये पलायन्तेऽतिनिश्चितम् ।
राजा प्रजा गजादिश्च नान्यथा शंकरोदितम् ।। १९७।।

युद्धभूमिसे शत्रुकी सेनाको भगानेके लिये पहले ॐ नमो भयङ्कराय ' इत्यादि मंत्र को १०८ बार जपकर सिद्ध करके पीछे प्रयोग करे मंगलके दिन काक और उल्लू पक्षीको लेकर उनके गलेमें भोजपत्र पर गोरोचनसे शत्रुके नामके साथ मन्त्र लिखकर बाँधकर छोड़ दे । जब दोनों पक्षी शत्रुके सामने जायंगे उसी समय शत्रुकी सेना भयभीत होकर राजा, प्रजा, हाथी घोड़े और पैदल सहित भाग जायगी ।। १९५ ।। १९७ ।।

जलस्तम्भनमन्त्र

ॐ नमो भगवते रुद्राय जलं स्तंभय स्तंभयठः ठःठः।।"

इति मंत्रः ।। अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।

पद्मकं नाम यद्द्रव्यं सूक्ष्मचूर्णं तु कारयेत्।

वापीकूपतडागादौ निक्षिपेत्स्तंभते जलम् ।। १९८ ।।

ॐ नमो भगवते ' इत्यादि मंत्र को १०८ बार जप कर सिद्ध करनेके पीछे कार्य करे। पद्मकी लकड़ीका चूर्ण करके मंत्रसे १०८ बारअभिमंत्रित करवापी, कूप प्रभृति जलाशयमें डालनेसे उसी समय जल स्तंभित हो जाता है ॥१९८॥

मेघस्तम्भन-मन्त्र

"ॐ नमो भगवते रुद्राय मेघं स्तंभय स्तंभय ठःठःठः ।।"

इति मंत्रः ।। अष्टोत्तरशतजपेना स्य सिद्धिः ।।

इष्टकाद्वयमादाय श्मशानांगारसंपुटे ।

स्थापयेद्वनमध्ये च मेघस्तंभनकारकम् ।। १९९ ।।

उपरोक्त मन्त्रको १०८ बार जपके सिद्ध कर दो ईंटोंके बीचमें श्मशानके अंगारको रख वनमें गाड़ देनेसे मेघ स्तंभित हो जाता है ।। १९९ ।।

नौकास्तंभन-मंत्र

ॐ नमो भगवते रुद्राय नौकां स्तंभय स्तंभय ठःठःठः ।"

इति मंत्रः ।। अष्टोत्तरशतजपेनास्य सिद्धिः ।।

भरण्यां क्षीरकाष्ठस्य कीलं पञ्चांगुलं क्षिपेत् ।

नौकास्तंभनमेतद्धि मूलदेवेन भाषितम् ।। २०० ।।

'ॐ नमो भगवते ० मन्त्रको १०८ बार जपके सिद्ध कर भरणीनक्षत्रमें क्षीरवृक्षकी पाँच अंगुलकी कील बनाकर नौकामें डाल देनेसे चलती हुई नौका रुक जाती है ।। २०० ।।

मनुष्यस्तम्भन-मन्त्र

ॐ नमो भगवते रुद्राय अमुकं स्तंभय स्तंभय

ठः ठः ठः ।। अष्टोत्तरशतजपेनास्य मन्त्रस्य सिद्धिः ।

नीत्वा रजस्वलावस्त्रं गोरोचनसमन्वितम् ।
यस्य नाम क्षिपेत्कुम्भे सद्यः स्तंभनकारकम् ।।२०१।।

उपरोक्त मन्त्रको १०८ बार जपकर सिद्ध करे। फिर रजस्वला स्त्रीका वस्त्र लेकर गोरोचन मिलाकर शत्रुके नामको लिखकर जलपूर्ण कलश में डाल देनेसे मनुष्य स्तंभित हो जाता है।। २० १ ।।

निद्रास्तम्भन-मन्त्र

"ॐ नमो भगवते रुद्राय निद्रां स्तंभय स्तंभय ठःठःठः ।।"
इति मन्त्रः । अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।
मूलं बृहत्या मधुकं पिष्ट्वा नस्यं समाचरेत् ।
निद्रास्तंभनमेतद्धि मूलदेवेन भाषितम् ।। २०२ ।।

बृहती और मुलैठीको पीस नाम लेनेसे निद्रा नहीं आती है। पहले उपरोक्त मन्त्रको १०८ बार जप कर सिद्ध कर ले ।। २०२ ।।

गोमहिष्यादिस्तंभन-मन्त्र

"ॐ नमो भगवते रुद्राय गोर्महिष्यादीन् स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः ।।" अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।
उष्ट्रस्यास्थि चतुर्दिक्षु निखनेद्भूतले ध्रुवम् ।
गोर्महिष्यादिकस्तंभः सिद्धियोग उदाहृतः ।। २०३ ।।

'ॐ नमो भगवते॰ इत्यादि मन्त्र को १०८ बार जपके सिद्ध करके पीछे गोशालाके चारों ओर ऊँटकी हड्डी गाड देनेसे गौ महिषी आदिका स्तंभन हो जाता है।। २०३ ।।

पशुस्तंभन-मन्त्र

"ॐ नमो भगवते रुद्राय अमुकं पशुं स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः ।।" अष्टोत्तरशतजपेनास्य मन्त्रस्य सिद्धिः ।

१—गौके स्तम्मनमें " गां स्तंभय २ " और महिषीके स्तम्भन में "महिषी स्तम्भय स्तम्भय " मन्त्र को साथ कहे ।

उष्ट्रलोम गृहीत्वा तु पशूपरि विनिक्षिपेत्।।
पशूनां भवति स्तंभः सिद्धियोग उदाहृतः।। २०४ ।।

उपरोक्त मन्त्रको १०८ बार जपके सिद्ध कर ले पीछे जिस पशु[1]को स्तंभित करना हो उसके ऊपर ऊंटके रोमको डाल देने से वह स्तंभित हो जाता है, इसको सिद्धयोग जानो ।। २० ७७ ।।

मोहन-मन्त्र

"ॐ ह्रीं कालि कपालिनि घोरनादिनि विश्वं विमोहय जगन्मोहय सर्वं मोहय मोहय ठः ठः ठः स्वाहा ।।" लक्षजपेनास्य मन्त्रस्य सिद्धिः ।।

मोहनके प्रयोग करने से पहिले पूर्णविधिसे पूजादि करके एक लाख मन्त्र जपकर सिद्ध कर ले, पीछे कार्यको करे ।

सर्वजगन्मोहनमन्त्र

श्वेतगुंजारसैः पेष्यं ब्रह्मदण्डयाश्च मूलकम् ।
लेपमात्रं शरीराणां मोहनं सर्वतो जगत् ।। २० ५ ।।

सफेद घुघचीके रसमें ब्रह्मदंडीकी जड़को पीस शरीरमें मन्त्र से अभिमंत्रित कर लगानेसे मनुष्य जगत्को मोहित करता है ।। २०५ ।।

गृहीत्वा तुलसीपत्रं छायाशुष्कं तु कारयेत् ।
अश्वगंधासमायुक्तं विजयाबीजसंयुतम् ।। २०६ ।।
कपिलाक्षीरसहिता वटी रक्तिप्रमाणतः ।
भक्षिता प्रातरुत्थाय मोहयेत्सर्वतो जगत् ।। २०७ ।।

तुलसीके पत्तोंको छायामें सुखाकर भांगके बीज और असगंधके साथ गौके दूधमें पीस रत्तीभरकी गोली बनावे इनको प्रातःकाल खानेसे सब जगत् मोहित हो जाता है ।। २०६ ।। ।। २०७ ।।

१–जिस पशुको स्तभित करना हो उस पशुके नामको मन्त्रके साथसाथ उच्चारण करना चाहिये ।

श्वेतार्कमूलं सिन्दूरं पेषयेत्कदलीरसे ।
अनेनैव तु तंत्रेण तिलकं लोकमोहनम् ।। २०८ ।।

सफेद आककी जड़ और सिन्दूर को केलेके रसमें पीस तिलक लगानेसे सब जगत मोहित हो जाता है ।। २०८ ।।

बिल्वपत्रं गृहीत्वा तु छायाशुष्कं तु कारयेत् ।
कपिलापयसार्द्धेन वटीं कृत्वा तु गोलकम् ।
एभिस्तु तिलकं कृत्वा मोहयेत्सर्वतो जगत् ।। २०९ ।।

बेलपत्रीको छायामें सुखाकर चूर्ण कर ले और गौके दूधके साथ गोली बनावें फिर गोलीको घिस तिलक लगानेसे सब जगत् मोहित हो जाता है ।। २०९ ।।

विद्वेषण-मन्त्र

"ॐ नमो नारायणाय अमुकस्य अमुकेन सह विद्वेषं कुरु कुरु स्वाहा ।।" अष्टोत्तरशतजपेन मंत्रसिद्धिः ।।

उपरोक्त मंत्र को १०८ बार जप कर सिद्ध करे, पीछे विद्वेष करानेके प्रयोगको करे ।।

एकहस्ते काकपक्षमुल्लूपक्षं करे परे ।
मंत्रयित्वा मिलेदग्रं कृष्णसूत्रेण बन्धयेत् ।। २१० ।।
अञ्जलिं च जले चैव तर्पयेद्धस्तपक्षके ।
एवं सप्तदिनं कुर्यादष्टोत्तरशतं जपेत् ।। २११ ।।

एक हाथ में काकपंख और दूसरे हाथ में उल्लूपक्षीके पंख लेकर उपरोक्त मंत्रसे अभिमंत्रित कर दोनों पंखों के अग्रभागको काले सूतके डोरेसे बाँध दे, फिर इन दोनों पंखोंको दोनों हाथोंमें लेकर जलमें तर्पण करे। सात दिन बराबर उपरोक्त मन्त्र पढ़कर १०८ बार तर्पण करे तो परस्पर में विद्वेष हो जाता है ।। २१० ।। २११ ।।

गृहीत्वा गजकेशं च गृहीत्वा सिंहकेशकम् ।
गृहीत्वा मृत्तिकापादं पुत्तलीं निखनेद्भुवि ।।२१२ ।।

अग्निस्तस्योपरि स्थाप्यो मालतीकुसुमं हुनेत् ।
विद्वेषं कुरुते तस्य नान्यथा शङ्करोदितम् ।। २१३ ।।

हाथी के और सिंहके बालोंको लाकर जिन दो मनुष्योंमें विद्वेष कराना हो उन दोनोंकी पुतली बना बालोंके साथ भूमिपर गाड़दे, फिर उस भूमिपर अग्निको स्थापनकर मालतीके फूलोंसे हवन करे, तो दोनों मनुष्योंमें विद्वेष हो जाता है। महादेवजीका कहा हुआ यह सत्य प्रयोग जानो ।।२१२।। ।।२१३।।

गृहीत्वा गजदन्तं च गृहीत्वा सिंहदन्तकम् ।
पेषयेन्नवनीतेन तिलकं द्वेषकारकम् ।। २१४ ।।

हाथीके दाँत और सिंहके दाँतोंको लेकर मक्खनके साथ पीस जिन दो मनुष्योंमें विद्वेष कराना हो उन दोनोंके मस्तकपर मंत्रसे अभिमन्त्रित कर तिलक लगावे तो परस्परमें विद्वेष हो जाता है ।। २१५ ।।

उच्चाटन-मंत्र

"ॐ नमो भगवते रुद्राय दंष्ट्राकरालाय अमुकं स्वपुत्रबांधवैः सह हन हन दह दह पच पच शीघ्रमुच्चाटय उच्चाटय हुंफट् स्वाहा ठः ठः ।।" अष्टोत्तरशतजपेन मंत्रसिद्धिः ।।

इस मन्त्रको विधिपूर्वक १०८ बार जपकर सिद्ध कर ले, पीछे उच्चाटनके प्रयोगको करे।

काकोलूकस्य पक्षं तु हुत्वा चाष्टाधिकं शतम् ।
यन्नाम्ना मंत्रयोगेन तदाऽस्योच्चाटनं भवेत् ।। २१५ ।।

जिसका उच्चाटन करना हो उसका नाम मन्त्रमें लेकर काक और उल्लके पंखोंद्वारा १०८ बार हवन करनेसे उसका उच्चाटन हो जाता है ।। २१५।।

ब्रह्मदंडी चिताभस्म शिवलिङ्गे प्रलेपयेत् ।। २१६ ।।
सिद्धार्थं चैव संयुक्तं शनिवारे क्षिपेद् गृहे ।
उच्चाटनं भवेत्तस्य जायते मरणान्तिकम् ।। २१७ ।।

एक शिवलिङ्ग बनाकर उसमें ब्रह्मदण्डी और चिताकी भस्मका लेप करे। फिर शनिवारके दिन सायंकालको सफेद सरसोंके साथ जिसके घरमें मन्त्रसे अभिमंत्रितकर डाले उस मनुष्यका उच्चाटन हो जाता है ।। २१६ ।। २१७ ।।

आकर्षण-मन्त्र

"ॐ नमः आदि पुरुषाय अमुकस्य आकर्षणं
कुरु कुरु स्वाहा ।।" अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।

इस मन्त्रको विधिपूर्वक १०८ बार जपके सिद्ध कर ले पीछे आकर्षणके प्रयोगको करे ।।

कृष्णधत्तूरपत्राणां रसं रोचनया युतम् ।
भूर्जपत्रे लिखेन्मत्रं श्वेतकरवीरलेखनैः ।। २१८ ।।
यस्य नाम लिखेन्मध्ये तापयेत्खदिराग्निभिः ।।
शतयोजनमायाति नान्यथा शंकरोदितम् ।। २१९ ।।

काले धत्तूरेके रसमें गोरोचनको घिसकर कनेरकी जड़की कलमसे भोजपत्रमें मंत्रके साथ जिसका नाम लिखकर खैरके अंगारे तपावे तो वह मनुष्य सौ योजन दूर होनेपर भी निश्चय आर्कषित हो जाता है ।। २१८ ।। २१९ ।।

अनामिकाया रक्तेन लिखेन्मन्त्रं चभूर्जके ।
यस्य मध्ये लिखेन्नाम मधुमध्ये च निक्षिपेत् ।। २२० ।।
तदा चाकर्षणं याति सिद्धियोग उदाहृतः ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं देवानामपि दुर्ल्लभम् ।। २२१।।

अनामिका उँगलीके रक्तद्वारा मन्त्रके साथ जिसका नाम भोजपत्र पर लिखकर शहदमें रखे तो वह आर्कषित होता है। यह सिद्धयोग देवताओंको भी दुर्लभ है, इस कारण साधारण मनुष्यको न देना चाहिये ।।२२० ।।२२१ ।।

मारणप्रयोग

अथातः संप्रवक्ष्यामि प्रयोगं मारणाभिधम् ।
सद्यः सिद्धिकरं नृणां श्रृणु रावण यत्नतः ।। २२२।।

शिवजी बोले—हे रावण ! अब मारणके प्रयोगको कहता हूँ, जिसके साधनसे मनुष्योंको शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है, उसको सावधानीसे सुनो ।।२२२।।

मारणं न वृथा कार्यं यस्य कस्य कदाचन ।
प्राणांतसंकटे जाते कर्त्तव्यं भूतिमिच्छता।। २२३ ।।

यह मारणका प्रयोग वृथा किसीपर न करे, प्राणांतसंकट उपस्थित होने पर अपने कल्याणकी इच्छासे मनुष्य मारणका अनुष्ठान करे ।। २२३ ।।

मूर्खेण तु कृते तन्त्रे स्वस्मिन्नेव समापतेत् ।
तस्माद्रक्ष्यः सदाऽऽत्मा वै मारणं न क्वचिच्चरेत् ।।२२४।।

मूर्ख मनुष्य द्वारा मारणका अनुष्ठान होनेसे स्वयं करनेवा ले पड़ जाता है अतएव (मूर्ख मनुष्य) अपनी रक्षा चाहे तो किसी पर मारणके प्रयोग को न करे ।। २२४ ।।

ब्रह्मात्मानं तु विततं दृष्ट्वा विज्ञानचक्षुषा ।
सर्वत्र मारणं कार्यमन्यथा दोषभाग् भवेत् ।।
कर्त्तव्यं मारणं चेत्स्यात्तदा कृत्यं समाचरेत् ।। २२५ ।।

ब्रह्मज्ञानी पुरुष सबको विज्ञानकी दृष्टिसे अपने समान जानकर यदि आवश्यकता हो तो मारणके प्रयोगको करे तो ठीक है, अन्य प्रकारसे दोषी होता है यदि मारणके प्रयोग को करना चाहे तो इस भाँति करे ।। २२५ ।।

"ॐ चाण्डालिनि कामाख्यावासिनि वनदुर्गे क्लीं क्लीं ठः स्वाहा ।। अयुतजपेन मन्त्रसिद्धिः ।।

स्वाहा ।		
मारय	हुँ	अमुकं
ह्रीं		फट्

इदं यन्त्रं लिखेद्भूर्जे रोचनाकुंकुमेन तु ।
भौमे वा मन्दवारे वा बद्ध्वाऽरिं नाशयेद्गले ।। २२ ६।।

'ॐ चांडालिनि' इत्यादि मन्त्रको दस हजार जपकर सिद्धि कर ले, पीछे मारणके प्रयोगको करे । उपरोक्त यन्त्रको भोजनपत्रपर गोरोचन और केशरसे

लिखकर मंगल वा शनिवारके दिन गलेमें धारण करनेसे शत्रुकी मृत्यु हो जाती है ।। २२६ ।।

"ॐ नमः सर्वकालसंहारय अमुकं हन हन क्रीं हुं फट् ।
भस्मीकुरु स्वाहा ।।" इति मंत्रः ।। सहस्रजपादस्य सिद्धिः
रिपुपादतलात्पांसुं गृहीत्वा पुत्तलीं कुरु ।
चिताभस्मसमायुक्तां मध्यमारुधिरान्विताम् ।।२२७ ।।
कृष्णवस्त्रेण संवेष्टय कृष्णसूत्रेण बन्धयेत् ।
कुशासने सुप्तमूर्तिर्दीपं प्रज्वालयेत्ततः ।। २२८ ।।
अयुतं प्रजपेन्मंत्रं पश्चादष्टोत्तरं शतम् ।
मंत्रराजप्रभावेण माषांश्चाष्टोत्तरं शतम् ।। २२९ ।।
पुत्तलीमुखमध्ये च निक्षिपेत्सर्वमाषकान् ।
अर्द्धरात्रिकृते योगे शक्रतुल्योऽपि मृत्युभाक् ।। २३० ।।
प्रातःकाले पुत्तलिकां श्मशानान्ते विनिक्षिपेत् ।
मासात्मकप्रयोगेण रिपोर्मृत्युर्भविष्यति ।। २३१।।

'ॐ नमः सर्वकालसंहाराय०' इस मन्त्रको १००० बार जपके सिद्ध कर ले, पीछे मारणके प्रयोगको करे । शत्रुके दोनों चरणोंके नीचेकी मिट्टी लाकर उसमें चिताकी भस्म और बीचकी अंगुलीका रुधिर मिलाकर पुतला बनावे । फिर काले कपडेसे उस पुतलेको लपेट काले सूतके डोरेसे बाँधे और कुशासनपर उस (पुतले) को सुलाकर दीपक जलावे । फिर वहाँ दश हजार मन्त्रको जपे और एकसौ आठ बार मन्त्र से अभिमन्त्रित कर १०८ उडद उस पुतलेके मुखमें डाले । आधी रातके समय इस प्रयोगके करनेसे इंद्रके समान शत्रुकी भी मृत्य होजाती है । प्रातःकाल उस पुतलेको श्मशानमें जाकर डाल दे । एक महीने इस प्रयोगको करनेसे शत्रुकी मृत्यु हो जाती है ।। २२७ ।। २३१ ।।

आर्द्रपटी विद्या

"ॐ नमो भगवति आर्द्रपटेश्वरि हरितनीलपटे कालि ।
आर्द्रजिह्वे चांडालिनि रुद्राणि कपालिनि ज्वालामुखि

सप्तजिह्वे सहस्रनयने एहि एहि अमुकं ते पशुं ददामि अमुकस्य जीवं निकृंतय एहि एहि तज्जीवितापहारिणि हुंफट् भूर्भुवः स्वःफट् रुधिरार्द्रवसाखादिनि मम शत्रून् छेदय छेदय शोणितं पिब पिब हुं फट् स्वाहा ।।" इति मंत्रः ।। अयुतजपेन सिद्धिः ।

'ॐ नमो भगवति आर्द्रपटेश्वरि०' मन्त्रको पहले १०००० विधिपूर्वक जप कर सिद्ध कर ले पीछे मारणके प्रयोगमें अमुकके स्थानपर शत्रुका नाम लेकर मन्त्रको जपे ।

ॐ अस्य श्री–आर्द्रपटीमहाविद्यामंत्रस्य दुर्वासा ऋषिर्गायत्री छंदः हुं बीजं स्वाहा शक्तिः मम अमुकशत्रुनिग्रहार्थे जपे विनियोगः ।।

जल हाथ में ले उपरोक्त विनियोग पढकर जल पृथ्वीपर छोडदे, अमुकके स्थानपर शत्रुका नाम ले ।।

केवलं जपमात्रेण मासान्ते शत्रुमारणम् ।
कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णचतुर्दशी ।। २३२ ।।
शत्रुनामसमायुक्तं मन्त्रं तावज्जपेन्नरः ।
रिपुपादस्थधूल्याश्च कुर्यात्पुत्तलिकां ततः ।।२३३ ।।
अजापुत्रं बलिं दत्त्वा वस्त्रं रक्तेन संलिपेत् ।
ततो गृहीत्वा तद्वस्त्रं न्यसेत्पुत्तलिकोपरि ।। २३४ ।।
यावच्छुष्यति तद्वस्त्र तावच्छत्रुर्विनश्यति ।
मन्त्रराजप्रभावेण नात्र कार्या विचारणा ।। २३५

केवल उपरोक्त मंत्रके जपसे १ मासमें शत्रुकी मृत्यु होती है । कृष्णपक्षकी अष्टमीसे कृष्णपक्षकी चतुर्दशीतक शत्रुके नामके साथ प्रतिदिन १०८ बार मन्त्र जपे । इस प्रयोगमें शत्रुके पैर तलेकी मिट्टी लाकर पुतली बनाकर बकरेकी बलि

दे और बकरेके रुधिरमें वस्त्र भिगोकर पुतलीको उढ़ा दे तो जबतक वह वस्त्र सूखेगा तबतक मंत्रराजके प्रभीवसे निश्चय ही शत्रुकी मृत्यु हो जायगी ।।२३२–२३५ ।।

इति श्रीमहादेवश्रीरावणसंवादे उड्डीशतन्त्रे पंडित–श्याम-
सुन्दरलालत्रिपाठिकृते भाषानुवादे षट्कर्मनिरूपणं
नाम पूर्वार्द्धं समाप्तम्

अथोत्तरार्द्धम्

रावण उवाच

सम्यगनुष्ठितो मन्त्रो यदि सिद्धो न जायते ।
किं कुर्याच्च ततो देव ब्रूहि मे परमेश्वर ।। १ ।।

रावण बोला– हे देव ! हे परमेश्वर ! यदि सम्यक् प्रकारके अनुष्ठान करनेपर मन्त्र सिद्ध न हो तब क्या करना चाहिये सो आप कहिये ।। १ ।।

शिव उवाच

सम्यगनुष्ठितो मन्त्रो यदि सिद्धो न जायते ।
पुनस्तेनैव कर्त्तव्यं ततः सिद्धो भवेद्ध्रुवम् ।। २ ।।

महादेवजीने कहा—यदि भलीभाँति विधानपूर्वक अनुष्ठान करनेपर मंत्र सिद्ध न हो तो फिर उसी मन्त्रका विधानसे अनुष्ठान करे ।। २ ।।

पुनरनुष्ठितो मन्त्रो यदि सिद्धो न जायते ।
पुनस्तेनैव कर्त्तव्यं ततः सिद्धो न संशयः ।। ३ ।।

जो दूसरी बार अनुष्ठान करनेपर भी मन्त्र सिद्ध न हो तो तीसरी बार अनुष्ठान करे तो निश्चय सिद्ध होगा ।। ३ ।।

पुनः सोऽनुष्ठितो मंत्रो यदि सिद्धो न जायते ।
उपायास्तत्र कर्त्तव्याः सप्त रावण प्रेमतः ।। ४ ।।

हे रावण ! यदि तीसरी वारके अनुष्ठान करनेपर भी मन्त्र सिद्ध न होतो सात उपाय प्रेमसे करे ।। ४ ।।

भ्रामणं रोधनं वश्यं पीडनं शोषपोषणे ।
दाहनान्तं क्रमात्कुर्यात्ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ ५ ॥

१ भ्रामण, २ रोधन, ३ वशीकरण, ४ पीड़न, ५ शोषण, ६ पोषण, और ७ दाहन इन सात उपायोंके करनेसे निश्चय सिद्धि प्राप्त होती है ॥ ५ ॥

भ्रामणं वायुबीजेन ग्रथनं क्रमयोगतः ।
यन्त्रे त्वालिख्य तन्मन्त्रं शिलहकर्पूरकुङ्कुमैः ॥ ६ ॥
उशीरचन्दनाभ्यां तु मन्त्रं संग्रथितं लिखेत् ।
क्षीराज्यमधुतोयानां मध्ये तल्लिखितं भवेत् ॥ ७ ॥
पूजनाज्जपनाद्धोमाद्भ्रमितः सिद्धिदो भवेत् ॥ ८ ॥

वायुबीज (वं) से मन्त्रके सब वर्णोंको अर्थात् पहले वं पीछे मंत्रका १ वर्ण फिर वं पिछे मंत्र का दूसरा वर्ण, इस रीतिसे यन्त्रमें सब मन्त्रके वर्ण शिलारस, कपूर, केशर, खस और चन्दनसे लिखे । फिर इस लिखे मन्त्रको दूध, घी, शहद, और जल में डाल दे । पीछे पूजा, जप और हवन करनेसे मंत्र सिद्ध हो जाता है । इसको मंत्रका भ्रामण कहते हैं । ६–८ ॥

भ्रामितो नैव सिद्धः स्याद्रोधनं तस्य कारयेत् ।
सारस्वतेन बीजेन संपुटीकृत्य संजपेत् ॥
एवं रुद्धो भवेत्सिद्धो न चेदेतद्वशीकुरु ॥ ९ ॥

यदि भ्रामणद्वारा भी मंत्र सिद्ध न हो तो मंत्रका रोधन करे, मंत्रको ऐं बीजसे पुटित कर जपनेसे मंत्रका रोधन होता है, रोधनद्वारा सिद्ध न हो तो वशीकरण करे ॥ ९ ॥

अलक्तं चन्दनं कुष्ठं हरिद्रा मादनं शिला ।
एतैस्तु मन्त्रमालिख्य भूर्जपत्रे सुशोभने ॥
धार्यः कंठे भवेत्सिद्धः पीडनं वाऽस्य कारयेत् ॥ १० ॥

अलक्तक, लालचन्दन, कूठ, हरिद्रा, धतूरेके बीज और मनशिलसे भोजपत्र पर मंत्र लिखकर कण्ठमें धारण करनेको मंत्रका वशीकरण कहते हैं । यदि वशीकरणसे भी मंत्र सिद्ध न हो तो पीडन करना चाहिये ॥ १० ॥

अधरोत्तरयोगन पदानि परिजप्य वै ।
ध्यायेच्च देवतां तद्वदधरोत्तररूपिणीम् ।। ११ ।।
विद्यामादित्यदुग्धेन लिखित्वाऽऽक्रम्य चांघ्रिणा ।
तथाभूतेन मन्त्रेण होमः कार्यो दिनेदिने ।
पीडितो लज्जयाऽऽविष्टः सिद्धः स्यादथ पोषयेत् ।।१२।।

अधरोत्तर योगसे मंत्र के पदोंको जपकर अधरोत्तररूपिणी देवाकी पूजा करे, पीछे आकके दूधसे मंत्र लिखकर दोनों चरणोंसे आक्रमण कर प्रतिदिन हवन करे, इसको मंत्रका पीडन कहते हैं । पीडनसे मंत्र सिद्ध न हो तो मंत्रका पोषण करे ।। ११ ।। १२ ।।

बालायास्त्रितयं बीजमाद्यन्ते तस्य योजयेत् ।
गोक्षीरमधुनाऽऽलिख्य विद्यां पाणौ विधारयेत् ।।
पोषितोऽयं भवेत्सिद्धो न चेत्कुर्वीत शोषणम् ।। १३ ।।

मंत्र के आदि और अन्तमें तीन बालाबीज मिलाकर जप करे और गौके दूध एवं शहदसे मंत्र लिखकर धारण करे, इसको मंत्रका पोषण कहते हैं । पोषणसे भी मंत्र सिद्ध न हो तो शोषण करना चाहिये ।। १३ ।।

द्वाभ्यां तु वायुबीजाभ्यां मन्त्रं कुर्याद्विदर्भितम् ।
एषा विद्या गले धार्या लिखित्वा वरभस्मना ।
शोषितश्चाप्यसिद्धश्चेद्दहनीयोऽग्निबीजतः ।। १४ ।।

मंत्रको वं बीजसे पुटित कर जपे और यज्ञकी भस्मसे भोजपत्र पर मंत्र लिख गलेमें धारण करे । इसको मंत्रका शोषण कहते हैं, यदि शोषणसे भी मंत्र सिद्ध न हो तो मंत्रका दाहन करना चाहिये ।। १४ ।।

आग्नेयेन तु बीजेन मन्त्रेष्वेकैकमक्षरम् ।
आद्यन्तमध्ये ह्यूर्ध्वं च योजयेद्दाहकर्मणि ।। १५।।
ब्रह्मवृक्षस्य तैलेन मंत्रमालिख्य धारयेत् ।
स्कन्धेदेशे ततो मंत्रः सिद्धः स्याच्छङ्करोदितः ।। १६।।

मन्त्रवर्णके आदि, मध्य और अन्तमें रंबीज मिलाकर जप करे और ढाकके बीजोंके तेलसे मन्त्र लिखकर स्कन्धमें धारण करे । महादेवजी कहते हैं—हे रावण ! इस प्रकार अनुष्ठान करनेसे सिद्धि प्राप्त होती है ।। १५ ।। १६ ।।

इत्येवं कथितं सम्यक्केवलं तव भक्तितः ।
एकेन तु कृतार्थः स्याद्बहुभिः किमु रावण ।। १७ ।।

महादेवजी बोले—हे, रावण ! केवल तुम्हारी भक्तिसे यह सात उपाय कहे । इनमेंसे एकके ही करनेपर मन्त्र सिद्ध हो जाय तो सबके करनेका प्रयोजन नहीं है ।। १७ ।।

रावण उवाच

देवदेव महेशान कृपां कृत्वा ममोपरि ।
लक्षणं मन्त्रसिद्धेस्तु ब्रूहि मे भक्तवत्सल ।। १८ ।।

हे देवदेव ! हे महेशान ! हे भक्तवत्सल ! मेरे ऊपर कृपा करके मन्त्रसिद्धिके लक्षण कहिये ।। १८ ।।

मनोरथानामक्लेशसिद्धिरुत्तमलक्षणम् ।
मृत्यूनां हरणं तद्वद्देवतादर्शनं तथा ।। १९ ।।

मनोरथकी सिद्धि ही मन्त्रसिद्धिका प्रधान चिह्न है । साधककी जिस समय जो इच्छा हो और वह अनायास पूर्ण हो जाय तब जानो कि मन्त्र सिद्ध हो गया और देवताका दर्शन होना और मृत्युका नाश होना भी मंत्रसिद्धिका लक्षण है ।। १९ ।।

प्रयोगस्याक्लेशसिद्धिः सिद्धेस्तु लक्षणं परम् ।
परकाय प्रवेशश्च पुरप्रावेशनं तथा ।।
ऊर्ध्वोत्क्रमणमेवं हि चराचरपुरे गतिः ।। २० ।।

तपस्यादिसे जिसको मन्त्रसिद्धि होती है उसको देवताका दर्शन होता है और वह अपनी मृत्युको जीत लेता है, आकाशमें एवं सम्पूर्ण चराचरमें जानेकी उसको शक्ति हो जाती है ।।२०।।

खेचरीमेलनं चैव तत्कथाश्रवणादिकम् ।
भूच्छिद्राणि प्रपश्येत्तु तत्त्वमस्य च लक्षणम् ।। २१ ।।

वह मनुष्य आकाशगामिनी देवियोंके साथ विराजमान होकर उनकी बात सुन सकता है, मन्त्रसिद्धि होने से मनुष्यको पार्थिवतत्त्वका ज्ञान होजाता है।।२१।।

ख्यातिर्वाहनभूषादिलाभः सुचिरजीवनम् ।
नृपाणां तद्गणानां च वशीकरणमुत्तमम् ।। २२ ।।

और इस मनुष्य की कीर्ति चारों ओर फैल जाती है, उसको अनेक वाहन और भूषणादि प्राप्त होते हैं, वह मनुष्य दीर्घजीवी, राजप्रिय होता है एवं वह मनुष्य राजाको और राजपरिवारको वशीभूत कर सकता है ।।२२।।

सर्वत्र सर्वलोकेषु चमत्कारकरः सुखी ।
रोगापहरणं दृष्टया विषापहरणं तथा ।। २३ ।।

वह सब मनुष्यों को अनेक अद्भुत कार्य दिखाकर आनंदसे विचरता है। उसका दर्शन करते ही सम्पूर्ण रोग और विघ्न दूर हो जाते हैं ।। २३ ।।

पाण्डित्यं लभते मन्त्री चतुर्विधमयत्नतः ।
वैराग्यं च मुमुक्षुत्वं त्यागितां सर्ववश्यताम् ।। २४ ।।

वह सब शास्त्रोंका जाननेवाला होकर चारों प्रकारके पांडित्यको प्राप्त करता है, विषयभोग में उसकी इच्छा नहीं रहती, वह निरन्तर भक्तिकी अभिलाषा करता है, उसकी सबको छोड़नेकी शक्ति और सबको वशीकरण करनेकी शक्ति उत्पन्न होती है ।। २४ ।।

अष्टांगयोगाभ्यसनं भोगेच्छापरिवर्ज्जनम् ।
सर्वभूतेष्वनुकम्पा सार्वज्ञादिगुणोदयः ।।
इत्यादि गुणसंपत्तिर्मध्यसिद्धेस्तु लक्षणम् ।। २५ ।।

अष्टांगयोगका अभ्यास हो जाता, विषयवासना दूर हो जाती, सर्व जीवोंमें दया उत्पन्न होती और उसको सर्वज्ञताशक्ति उत्पन्न हो जाती है। इन सब गुणोंसे युक्त होने पर मनुष्य को मध्यम सिद्धि प्राप्त हुई जानो ।। २५ ।।

ख्यातिर्वाहनभूषादिलाभः सुचिरजीवनम् ।
नृपाणां तद्गणानां च वात्सल्यं लोकवश्यता ।। २६ ।।

महैश्वर्यं धनित्वं च पुत्रदारादिसम्पदः ।।
अधमाः सिद्धयः प्रोक्ता मंत्रिणामाद्यभूमिकाः ।। २७ ।।

जिसको अधम सिद्धि प्राप्त होती है, उसको यश और वाहन भूषाणादि प्राप्त होते हैं, वह दीर्घजीवी होता है, राजाका प्रिय होता है, राजपरिवार उसके साथ प्रेम करता है, समस्त लोक उसके वशीभूत होते हैं, वह मनुष्य अनेक ऐश्वर्य और धन सम्पत्तिको प्राप्त करता है और पुत्र पौत्रादियुक्त होता है। मन्त्रसिद्धिकी प्रथमावस्थामें ये सब चिह्न उदय होते हैं । २६–२७ ।।

सिद्धमन्त्रस्तु यः साक्षात्स शिवोनात्र संशयः ।। २८ ।।

मन्त्रसिद्धि होने पर मनुष्यको साक्षात् शिवस्वरूप समझना चाहिये ।। २८ ।।

रावण उवाच

देवदेव महादेव पार्वतीप्राणवल्लभ ।
इदानीं मन्त्रदोषांस्तु कथयस्व कृपानिधे ।। २९ ।।

रावण बोला– हे देवदेव ? हे पार्वतीके प्राणवल्लभ ? हे कृपानिधे ? इस समय मन्त्रोंके दोषोंको वर्णन करिये ।। २९ ।।

शिव उवाच

राक्षसाधिप अत्रैव मंत्रदोषो निरूप्यते ।
तत्सर्वं शृणु विप्र त्वमेकचित्तेन चेतसा ।। ३० ।।

शिवजीने कहा–हेराक्षसेंद्र ? हे विप्र अब मन्त्रों के दोषोंको कहता हूँ, उन्हें तुम एकचित होकर सुनो ।। ३० ।।

छिन्नो रुद्धः शक्तिहीनः पराङ्मुख उदीरितः ।
बधिरो नेत्रहीनश्च कीलितः स्तंभितस्तथा ।। ३१ ।।
दग्धः स्त्रस्तश्च भीतश्च मलिनश्च तिरस्कृतः ।
भेदितश्च सुषुप्तश्च मदोन्मत्तश्च मूर्च्छितः ।। ३२ ।।
हृतवीर्यश्च हीनश्च प्रध्वस्तो बालकः पुनः ।
कुमारस्तु युवा प्रौढो वृद्धोनिर्स्त्रिंशकस्तथा ।। ३३ ।।

निर्वीर्यः सिद्धिहीनश्च मन्दः कूटस्तथा पुनः ।
निरंशकः सत्त्वहीनः केकरो जीवहीनकः ।। ३४ ।।
धूमितालिङ्गितौ स्यातां मोहितस्तु क्षुधार्त्तकः ।
अतिदृप्तोऽङ्गहीनः स्यादतिक्रुद्धः समीरितः ।। ३५ ।।
अतिक्रूरश्च सव्रीडः शान्तमानस एव च ।
स्थानभ्रष्टश्च विकलो निःस्नेहः परिकीर्त्तितः ।। ३६ ।।
अतिवृद्धः पीडितश्च वक्ष्याम्येषां च लक्षणम् ।। ३७ ।।

जो समस्त मंत्र छिन्न, रुद्ध, हीनशक्ति, पराङ्मुख, बधिर, नेत्रहीन, कीलित, स्तंभित, दग्ध, त्रस्त, भीत, मलिन, तिरस्कृत, भेदित, सुषुप्त, मदोन्मत्त, मूर्छित, हत्तवीर्य हीन, प्रध्वस्त, बाल, कुमार, युवा, प्रौढ, वृद्ध, निस्त्रिंशक, वीर्यहीन, सिद्धिशून्य, मन्द, कूट, निरंशक, सत्त्वहीन केकर, जीवहीन, धूमित आलिङ्गित, मोहित, क्षुधातुर, अतिदृप्त, अंगहीन, अतिक्रुद्ध, अतिक्रूर, व्रीडायक्त, शान्तचित्त, स्थानच्युत, विकल स्नेहशून्य, अतिवृद्ध और पीडित इन सब मंत्रोंको दोषयुक्त जानो। छिन्नादि दोषयुक्त मंत्रों के लक्षण कहता हूँ ।। ३१-३७ ।।

मनोर्यस्यादिमध्यान्तेष्वानिलं बीजमुच्यते ।
संयुक्तं वारियुक्तं वा पुराक्रान्तं त्रिधा पुनः ।।
चतुर्द्धा पञ्चधा वापि स मन्त्रश्छिन्नसंज्ञकः ।। ३८ ।।

जिस मंत्र के आदि, मध्य और अन्तमें वं या यं बीज हों वा चतुर्द्धा और पंचधा स्वरयुक्त हो उसको छिन्न मंत्र कहते हैं ।। ३८ ।।

आदिमध्यावसानेषु भूबीजद्वयलक्षितः ।
रुद्धमंत्रः स विज्ञेयो भुक्तिमुक्तिविवर्जितः ।। ३९ ।।

जिस मंत्र के आदि, मध्य और अंतमें दो लं बीज हों उसको रुद्ध मंत्र कहते हैं, रुद्ध मंत्र भुक्ति और मुक्तिसे शून्य जानो ।। ३० ।।

मायात्रितत्त्वश्रीबीजऐंविहीनश्च यो मनुः ।
शक्तिहीनः स कथितो यस्य मध्ये न वर्त्तते ।। ४० ।।

जिस मंत्रमें ह्री, औं, श्रीं वा ऐं बीज न हों उसको शक्तिहीन कहते हैं ।। ४०।।

कामबीजं मुखे माया शिरस्यंकुशमेव च ।
असौ पराङ्मुखः प्रोक्तो हकारो बिन्दुसंयुतः ।। ४१ ।।

जिस मन्त्रके बीचमें क्लीं, आदिमें ह्रीं और अंतमें क्रों बीज हो उसको पराङ्मुख मन्त्र कहते हैं ।। ४१ ।।

आद्यन्तमध्येष्विदुर्वा स भवेद्बधिरः स्मृतः ।। ४२ ।।
पंचवर्णो मनुर्यः स्याद्रेफार्केन्दुविवर्ज्जितः ।
नेत्रहीनः स विज्ञेयो दुःखशोकामयप्रदः ।। ४३ ।।

जिस मन्त्रके आदि, मध्य और अंतमें हं वा सं बीज हो उसे बधिर मन्त्र कहते हैं । ४२ ।। पंचाक्षरात्मक एवं र. श. स. रहित मन्त्रको नेत्रहीन कहते हैं । नेत्रहीन मन्त्रकी उपासना करनेसे शोकित और रोगी होता है ।। ४२ ।।

आदिमध्यावसानेषु हंसः प्रासादवाग्भवौ ।
बिन्दुयुक्तं हकारं वा फट्कारं वा तथैव च ।। ४४ ।।
अंकुशं च तथा मायां नमामि च ततः परम् ।
स एव कीलितो मंत्रः सर्वसिद्धिविवर्जितः ।। ४५ ।।

जिस मंत्र के आदि, मध्य और अन्तमें हंसः, हौं, ऐं हं, फट्, क्रौं, ह्रीं एवं नमामि हो तो उसे कीलितमन्त्र कहते हैं । कीलित मन्त्रके जपनेसे सब सिद्धि नष्ट हो जाती हैं ।। ४४-४५ ।।

एकं मध्ये द्वयं मूर्ध्नि यस्मिन्नस्त्रिपुरन्दवौ ।
न विद्यते स मंत्रस्तु स्तंभितः सिद्धिवर्ज्जितः ।। ४६ ।।

जिस मंत्र के बीचमें लं वा फट् हो और अन्तमें दोनो बीजोंमेंसे एक भी न हो तो उस मन्त्रको स्तंभित कहते हैं। स्तंभित मन्त्रके जपनेसे किसी प्रकारकी किसी प्रकारकी सिद्धि नहीं होती है ।। ४६ ।।

वह्निर्वायुसमायुक्तो यस्य मन्त्रस्य मूर्द्धनि ।
सप्तधा दृश्यते तं तु दग्धमन्त्रं प्रचक्षते ।। ४७ ।।

सात अक्षरके मन्त्रमें र और यवर्ण होनेसे उसे दग्ध मन्त्र कहते हैं ।। ४७ ।।

अत्र द्वाभ्यां त्रिभिः षड्भिरष्टभिर्दृश्यतेऽक्षरैः ।
स्रस्तः स कथितो मन्त्रः सर्वसिद्धिविवर्ज्जितः ।। ४८।।

दो अक्षर, तीन अक्षर , छः अक्षर, आठ अक्षर और फट्युक्त मंत्रको स्रस्त मन्त्री कहते हैं, स्रस्तमंत्रसे सिद्धि नहीं होती है ।। ४८ ।।

यस्य नास्ति मुखे माया प्रणवो वा विधानतः ।
भीतः स कथितो मन्त्रः सर्वसिद्धिविवर्ज्जितः ।। ४९ ।।

जिस मंत्र के आदिमें ह्रीं वा प्रणव इन दोनोंमेंसे एक भी न हो तो उसे भीत-मन्त्र कहते हैं । भीतमंत्र के जपनेसे सिद्धि नहीं होती है ।। ४९ ।।

आदौ मध्ये तथा चान्ते यस्य वर्णचतुष्टयम्।
स एव मलिनो मन्त्रः सर्वविघ्नसमन्वितः ।। ५० ।।

जिस मन्त्रके आदि, मध्य और अन्तमें चार चार वर्ण दृष्ट हों उसे मलिन मन्त्र कहते हैं । मलिन मन्त्रके जपने से विघ्न होता है ।। ५० ।।

यस्य मध्ये दकारो वा कवचं मूर्ध्नि दृश्यते ।
त्रिविधं दृश्यते चास्त्रं तिरस्कृत उदाहृतः ।। ५१ ।।

जिसके मध्य में द, आदिमें हुं और अन्तमें फट् हो उस मन्त्रको तिरस्कृत कहते हैं ।। ५१ ।।

हृद्वयं हृदये शीर्षे वषट् वौषट् च मध्यतः ।
स एव भेदितो मन्त्र, सर्वशास्त्रविवर्जितः ।। ५२ ।।

जिसके हृदयमें दो ह, मस्तक में वषट् और बीचमें वौषट् हो उसे भेदित मंत्र कहते हैं। भेदित मंत्रकी उपासना नहीं करनी चाहिये ।।५२।।

त्रिवर्णो हंसहीनो यः स सुषुप्त उदाहृतः ।। ५३ ।।

तीन अक्षरके मंत्र में हंसः बीज न हो तो, उसे सुषुप्त मंत्र कहते ह ।। ५३ ।।

मन्त्रो वाप्यथवा विद्या सप्ताधिकदशाक्षरः ।
फट्कारपञ्चकादिर्यो मदोन्मत्त उदाहृतः ।। ५४ ।।

स्त्रीदैवत वा पुंदैवत मन्त्र यदि सप्तदशाक्षरात्मक और फट्कार पंचकादि हो तो उसे मदोन्मत्त मन्त्र कहते हैं ।। ५४ ।।

सप्तदशाक्षरो मन्त्रो मध्ययेऽर्द्धं च यदा भवेत् ।
मूर्च्छितः कथितो मन्त्रः सर्वसिद्धिविवर्जितः ।।५५।।

यदि १७ अक्षरके मंत्रके बीचमें फट् हो तो उसे मूर्च्छित मंत्र कहते हैं, मूर्च्छित मंत्र सिद्धि नहीं देता है ।। ५५ ।।

पञ्च फट् यस्य मन्त्रस्य विरामस्थानसंयुतः ।
हृतवीर्यः स कथितो नास्ति तेन प्रयोजनम् ।। ५६ ।।

मन्त्र के अन्तमें पाँच फट्कार होनेसे हृतवीर्य कहाता है। हृतवीर्य जप न करे ।। ५६ ।।

आदौ मध्ये तथा चान्ते चतुरस्त्रयुतो मनुः ।
स एव हीनमन्त्रः स्यात्तथा चाष्टादशाक्षरः ।। ५७ ।।

जिसके आदि, मध्य और अन्तमें चार फट्कार हों और यदि वह मन्त्र १८ अक्षरका हो तो उसे हीन मन्त्र कहते हैं ।। ५६ ।।

एकोनविंशो यो मन्त्रस्तारवर्णसमन्वितः ।
हृल्लेखाङ्कुशबीजाढ्यं प्रध्वस्तं तं प्रचक्षते ।। ५८ ।।

२१ अक्षरके मन्त्रमें ॐ ह्रां क्रों यह तीन बीज हों तो उसे प्रध्वस्त मन्त्र कहते हैं ।। ५८ ।।

सप्तवर्णः स्मृतो बालः कुमारोऽष्टाक्षरः स्मृतः ।
षोडशार्णो युवा मंत्रः सर्वसिद्धिविवर्जितः ।। ५९ ।।

७ अक्षरके मन्त्र को बाल, ८ अक्षरके मन्त्रको कुमार और १६ अक्षरके मन्त्र को युवा मन्त्र कहते हैं । इन सबकी आराधना नहीं करनी चाहिये ।। मन्त्र कहते हैं । इन सबकी आराधना नहीं करनी चाहिये ।। ।। ५९ ।।

चतुर्विशल्लिपिर्यः स्यात्प्रौढः स परिकीर्तितः ।। ६० ।।

२४ अक्षरके मन्त्रको प्रौढ मन्त्र कहते हैं ।। ६० ।।

त्रिंशद्वर्णश्चतुःषष्टिवर्णो मंत्रः शताक्षरः ।
चतुःशताक्षरश्चापि वृद्धः स परिकीर्त्तितः ।। ६१ ।।

३० अक्षरके, ६४ अक्षरके, १०० अक्षरके और ४०० अक्षरके मन्त्रको वृद्ध मन्त्र कहते हैं ।। ६१ ।।

नवाक्षरो ध्रुवयुतो मनुर्निस्त्रिंश ईरितः ।।६२।।

९ अक्षरके मन्त्रको निस्त्रिंश कहते हैं ।। ६२ ।।

यस्यावसाने हृदयं शिवमन्त्रौ च मध्यतः ।
शिखा वर्म च न स्यातां वौषट् फट्कार एव च ।।
शिवशक्त्यवहीनो वा स निर्वीर्य उदाहृतः ।। ६३ ।।

जिसके अन्तमें नमः, बीचमें स्वाहा हो जिसमें वषट् और हुं बीज न हो और

वौषट् फट्कारयुक्त हो अथवा शिवशक्ति वर्णहीन हो तो उस मन्त्रको निर्वीर्य मन्त्र कहते हैं ।। ६३ ।।

एषु स्थानेषु फट्कारः प्रौढो यस्मिन्प्रदृश्यते ।
स मन्त्रः सिद्धिहीनःस्यान्मन्दः पंक्त्यक्षरोमनुः ।। ६४ ।।

जिस मन्त्रके आदि मन्त्रादि स्थानमें ६ फट्कार हों उसे सिद्धि हीन कहते हैं जिस मन्त्र में पंक्ति (दश) अक्षर दृष्टि आवें उसे मन्द मन्त्र कहते हैं ।। ६४ ।।

कूट एकाक्षरो मन्त्रः स वोक्तो निरंशकः ।
द्विवर्णः सत्त्वहीनः स्याच्चतुर्वर्णस्तु केकरः ।। ६५ ।।

एक अक्षरके मन्त्रको कूट, उसी मन्त्रको निरंशक कहते हैं द्वयक्षरात्मक मन्त्रको सत्वहीन और चार वर्णके मन्त्रको केकर कहते हैं ।। ६५ ।।

षडक्षरो जीवहीनः सार्द्धसप्ताक्षरो मनुः ।
सार्द्धद्वादशवर्णोऽपि धूमितः स तु निन्दितः ।। ६६ ।।

६ अक्षरके और ७ ।। अक्षरके मन्त्रको जीवहीन मन्त्र कहते हैं, एवं १२।। अक्षरके मन्त्रको धूमित कहते हैं । यह धूमित मन्त्र निन्दित है ।। ६६ ।।

सार्णाबीजद्वयं तद्वदेकविंशतिवर्णकः ।
विंशार्णास्त्रिशवर्णो वा यः स्यादालिङ्गितः स्मृतः ६७

ढाई बीजयुक्त, २१ अक्षरके, २० अक्षरके और ३० अक्षरके मन्त्रको आलिङ्गित मन्त्र कहते हैं ।। ६७ ।।

द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो मोहितः परिकीर्त्तितः ।। ६८ ।।

२२ अक्षरके मन्त्रको मोहित कहते हैं ।। ६८ ।।

चतुर्विंशतिवर्णो यः सप्तविंशतिवर्णकः ।
क्षुधार्त्तः स तु विज्ञेयो द्वात्रिंशद्वर्णसंज्ञकः ।। ६९ ।।

एकादशाक्षरो वापि पञ्चविंशतिवर्णकः ।
त्रयोविंशतिवर्णो वा मन्त्रो दृप्त उदाहृतः ।। ७० ।।

२४ अक्षरके वा सत्ताईस अक्षरके मंत्रको क्षुधार्त्त कहते हैं । २२ अक्षरके, ११ अक्षरके, २५ अक्षरके और २३ अक्षरके मंत्रको अतिदृप्त कहते हैं ।।६९।।७०

षड्विंशत्यक्षरो मन्त्रः षट्त्रिंशद्वर्णकस्तथा ।
त्रिंशदेकोनवर्णो वा त्वंगहीनः स एव हि ।। ७१ ।।

२६ अक्षरके मन्त्रको, ३६ अक्षरके मन्त्रको और ३१ अक्षरके मन्त्रको अंगहीन कहते हैं ।। ७१ ।।

अष्टाविंशदक्षरो वा एकविंशदथापि वा।
अतिक्रुद्धःस विज्ञेयो निन्दितः सर्वकर्मसु ।। ७२ ।।

२८ अक्षरके मन्त्रको और २१ अक्षरके मन्त्रको अतिक्रुद्ध कहते हैं । यह मंत्र सब कार्योंमें वर्जित है ।। ७२ ।।

त्रिंशदक्षरको मन्त्रस्त्रयस्त्रिंशदथापि वा ।
अतिक्रूरः स विज्ञेयो निन्दितः सर्वकर्मसु ।। ७३ ।।

३० अक्षरके मन्त्रको और ३३ अक्षरके मंत्रको अतिक्रूर कहते हैं । यह सब कार्योंमें वर्जित है ।। ७३ ।।

चतुर्विंशं समारभ्य त्रिषष्टिर्यावता भवेत् ।
तावत्संख्या निगदिता मन्त्राः सव्रीडसंज्ञकाः ।। ७४ ।।

२४ अक्षरके मन्त्रसे लेकर ६३ अक्षरतकके मन्त्रोंको सव्रीड कहते हैं ।। ७४ ।।

पंचषष्टचक्षरा ये स्युर्मन्त्रास्ते शान्तमानसाः ।। ७५ ।।

६५ अक्षरके मंत्रको शान्तचित्त कहते हैं ।। ७५ ।।

एकोनशतपर्यंतं पञ्चषष्ट्यक्षरादितः ।
ते सर्वे कथिता मन्त्राः स्थानभ्रष्टा न शोभनाः ॥ ७६ ॥

६५ अक्षरके मन्त्रसे लेकर ९९ अक्षरतकके मंत्रोंको स्थानच्युत कहते हैं ॥ ७६ ॥

त्रयोदशाक्षराद्याः स्युर्मन्त्राः पञ्चदशाक्षराः ।
ते सर्वे विकला ज्ञेयाः शतं सार्द्धं शतं तु वा ॥ ७७ ॥
शतद्वयं द्विनवतिरेकहीना तथाऽपि वा ।
यावच्छतद्वयं संख्या निःस्नेहास्ते प्रकीर्तिताः ॥ ७८ ॥

१३ अक्षरके, १४ अक्षरके और १५ अक्षरके मन्त्रको विकल मन्त्र कहते हैं। १०० अक्षरके, १५० अक्षरके, २०० अक्षरके, ९१ अक्षरके, ९२ अक्षरके वा २०० अक्षरके मंत्रों को निःस्नेह कहते हैं ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

चतुःशतमथारभ्य यावद्वर्णसहस्रकम् ।
अतिवृद्धः स मन्त्रस्तु सर्वशास्त्र विर्जितः ॥ ७९ ॥

४०० अक्षरसे १,००० अक्षरतकके मन्त्रोंको अतिवृद्ध कहते हैं। ये सब शास्त्रोंमें वर्जित हैं ॥ ७९ ॥

सहस्रार्णाधिका मन्त्रा दण्डकाः पीडिताक्षराः ॥ ८० ॥

जिस मन्त्र में १०००० वर्णसे अधिक वर्ण हों उसे पीडित मन्त्र कहते हैं।

द्विसहस्राक्षरा मन्त्राः खण्डशः सप्तधाश्रिताः ।
ज्ञातव्याः स्तोत्ररूपास्ते मन्त्रा एते न संशयः ॥
तथा विद्याश्च बोद्धव्या मन्त्रिभिः सर्वकर्मसु ॥ ८१ ॥

जिस मन्त्र में २००० अक्षर हों उसको ७ भाग में बाँटकर जप करे। मन्त्र क्या विद्या, क्या, जिस किसी की उपासना करनी हो तो इन सब दोनोंको जानकर अनुष्ठान करे ॥ ८१ ॥

दोषानिमानविज्ञाय यो मन्त्रं भजते बुधः ।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ॥ ८२ ॥

जो मनुष्य विना दोषको जाने मन्त्रको जपते हैं उसको सौ करोड कल्पोंमें भी सिद्धि नहीं हो सकती है। (अतएव बुद्धिमान् पुरुष मन्त्रों के दोषोंको जान उन दोषोंकी शांति करके मन्त्र जपे) ॥ ८२ ॥

रावण उवाच

भगवंस्त्वत्प्रसादेन मंत्राणा दोषलक्षणम् ।
श्रुतं सर्वं विधिं ब्रूहि मन्त्रा दुष्टाः फलप्रदाः ॥ ८३ ॥

रावण बोला कि हे भगवन्! (महादेवजी!) आपके प्रसादसे मैंने सब मन्त्रोंके दोष और लक्षण सुने, अब कृपा करके उस विधिको कहिये, जिससे यह दोषयुक्त मन्त्र शुभफलको दें ॥ ८३ ॥

शिव उवाच

छिन्नादिदुष्टा ये मन्त्रास्ते तन्त्रे च निरूपिताः।
ते सर्वे सिद्धिमायान्ति मातृकार्णप्रभावतः ॥ ८४ ॥

शिवजी बोले- हे रावण! तन्त्र शास्त्रमें जो छिन्नादि दूषित मन्त्र कहे हैं वे मातृकावर्ण के प्रभावसे दोषमुक्त होकर सर्व सिद्धि देते हैं ॥ ८४ ॥

मातृकार्णैः पुटीकृत्य मन्त्रं विद्याद्विशेषतः ॥ ८५ ॥
शतमष्टोत्तरं पूर्वं प्रजपेत्फलसिद्धये ।
तदा मन्त्रो महाविद्या यथोक्तफलदो भवेत् ॥ ८६ ॥

मन्त्र वा विद्याको मातृ[1]कावर्णसे पुटितकर १०८ बार फलके सिद्धिके निमित्त जप करे तो मन्त्रोंका छिन्नादि दोष दूर होकर अभीष्ट फल प्राप्त होता है ॥८५ ॥ ८६ ॥

बध्वा तु योनिमुद्रां तां संकोच्याधारपङ्कजम् ।
तदुत्पन्नान्मन्त्रवर्णान्कुर्वतश्च गतागतान् ॥ ८७ ॥
ब्रह्मरन्ध्रावधि ध्वात्वा वायुमापूर्य कुम्भयेत् ।
सहस्रं प्रजपेन्मन्त्री मन्त्रदोषप्रशान्तये ॥ ८८ ॥

योनिमुद्राको बांध आधारकमलको सकोड मूलाधारसे उत्पन्न संपूर्ण वर्णोंको ब्रह्मरंध्रतक आते जाते हुए विचारे, पीछे वायु पूरण कर कुंभक करके एक हजार बार मन्त्रको जपे तो मन्त्रका दोष दूर होजाता है ॥ ८८ ॥

एषु दोषेषु प्राप्येषु मायां काममथापिवा ।
क्षिप्त्वा चादौ श्रियं चैव तद्दूषणविमुक्तये ॥ ८९ ॥

अन्य प्रकारसे भी दोष दूर करने की विधि है—यदि मन्त्र छिन्नादि दोषोंसे युक्त हो तो पहले मायाबीज, कामबीज और श्रीबीजको मिलाकर जप करनेसे मन्त्रका दोष दूर हो जाता है ॥ ८९ ॥

रावण उवाच

भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि जायते च कुतहलम् ।
पादुकागुटिकासिद्धि भ्रमणं च जलोपरि ॥ ९० ॥
मृतसंजीविनीविद्यामदृश्योपायमुत्तमम् ।
सम्यक्कथय मे सर्वं कृपां कृत्वा दयानिधे ॥ ९१ ॥

१—पहले मातृकावर्ण, पीछे मन्त्रका वर्ण, फिर मातृकावर्ण इस प्रकार से पुटित कर मंत्र जपना चाहिये ।

रावण बोला—हे भगवन् हे दयानिधे ? पादुका और गुटिकासाधन, जलोपरि भ्रमण, मृतसञ्जीविनी विद्या और अदृश्य होनेकी रीति जाननेकी मुझे बड़ी अभिलाषा है सो आप कृपा करके इन सबको कहिये ।। ९० ।। ९१ ।।

शंकर उवाच

क्रमतः संप्रवक्ष्यामि शृणु रावण यत्नतः ।। ९२ ।।

शिवजी बोले—हे रावण ? मैं क्रमसे सब वर्णन करता हूँ तुम यत्नसे सुनो।

पादुकासाधनमन्त्र

" ॐ नमश्चन्द्रमसे चन्द्रशेखर नमो भगवते तिष्ठ नमो भगवते नमः शिखरे नमः शूलिने नमः पादप्रचारिणे वेगिने हुंफट् स्वाहा ।।" त्रिलक्षजपेन सिद्धिः ।

उपरोक्त मंत्र पादुकासाधनका है, तीन लाख विधानपूर्वक जपनेसे सिद्ध होता है।

सारिकाया वसां नेत्रमंत्राणि रुधिरं तथा ।
काकपित्तं तथा नेत्रं हरिचन्दनवेतसम् ।। ९३ ।।
शुनो मज्जां वसां तुल्यमुष्ट्रीक्षीरेण भावयेत् ।
पादलेपः प्रकर्त्तव्यो नमस्कृत्य शिवं तथा ।। ९४ ।।
योजनं लक्षमेकं तु निमिषार्द्धेन गच्छति ।
गगनाशेषचारी च क्रीडत्येव यथा शिवः ।। ९५ ।।

मैना पक्षीकी चर्बी, नेत्र आंतें और रुधिर एवं काकका पित्ता, और नेत्र, केशर,वेतसलता, कुत्तेकी मज्जा और चर्बी इन सबको समान ले ऊँटनीके दूधमें घोस महादेवजीको प्रणाम कर तीन बार उक्त द्रव्यको उपरोक्तमन्त्रसे अभिमंत्रित कर पैरोंमें लेप करे तो आधे पलमें वह मनुष्य लक्ष योजन जा सकता है और वह शिवजीके समान आकाशमें भ्रमण कर सकता है ।।९३।। -९५ ।।

गुटिकासाधन

साधकश्चिल्हालयं गत्वा नित्यं तस्यै निवेदयेत् । देवताबुद्ध्याऽतिभक्त्या भक्षणार्थं किञ्चित्किञ्चिदाममांसं निक्षिपेत् यावत् प्रसूता भवति । ततः पारदं-रसं सार्द्धनिष्कत्रयं कस्मिंश्चिन्नालिकाद्वये निक्षिपेत् । तस्याधरोर्ध्वच्छिद्रं सिक्थकेन रुद्ध्वा चिल्हालयं गत्वा अंडद्वयस्योपरि नालिकाद्वयं निधाय लोहशलाकया नालिकामध्यमार्गेण तदंडं लघुहस्तेन वेधयित्वा शलाकामुद्धरेत् । तेनैव मार्गेण अंडमध्ये यथा रसो गच्छति तथा यत्नं कुर्यात् । ततश्छिद्रं चिल्हाविष्ठया लिंपेत् । ततस्तद्वृक्षाधो नित्यमसिबल्युपहारेण पूजां कुर्यात् । यावत्स्वयमेवाण्डानि स्फुटंति तावन्नित्यमुपरि गत्वा वीक्षयेत् । स्फुटिते सति गुटिकाद्वयं ग्राह्यम् । ततो वृक्षादुत्तीर्य यो गिलति मनुष्यस्तस्मै एका देया अपरां स्वयं मुखे धारयेत् । योजनद्वादशं गत्वा पुनरेव निवर्त्तते । ! ह्रीं हुंफट् चिल्लाचक्रेश्वरि परात्परेश्वरी पादुकामासनं देहि मे देहि स्वाहा । अनेन मंत्रेण जपं पूजां च कुर्यात् ।। ९६ ।।

पहले चीलके घोंसलेंमें जाकर चीलको देवता मान पूजन करे । प्रतिदिन इस प्रकार पूजन करके थोड़ा थोड़ा मांस दे । जब तक प्रसवका समय न आवे ऐसे ही देता रहे । प्रसवके अन्तमें दो नल बनाकर उसके ऊपर और नीचेके छेद को मोमसे बंद करदे । फिर उसमें साढ़ेतीन तोले पारा भरकर दोनों नल दोनों अण्डोंपर धरे और एक लोहेकी सलाई नलके ऊपरी मुँहमें डालकर

सावधानी से अण्डेमें छेद करे । यह छेद बड़े हलके हाथ से करे जिससे इस छेदमें होकर नलका पारा अण्डे में चलाजाय और अण्डा न टूटे फिर उस अण्डेके छेदको चीलकी बीटसे बन्द करके, जबतक अण्डा नफूटे तबतक प्रतिदिन मांस बलि देकर चीलका पूजन करे और अण्डेको देखे । जब अण्डा स्वयं फूटे तब उसमें देखे दो गुटके हुए हैं, फिर इन दोनों गुटकोंको लाकर एक दूसरेको दे और एक अपने मुखमें धरे । इस प्रयोगसे मनुष्य सौ योजन जाकर फिर लौट आ सकता है । ॐ ह्रीं, इत्यादि मूलमें लिखे मन्त्रका एक लाख जपकर सिद्ध कर ले, पीछे इसका अनुष्ठान करना चाहिये ।। ९६ ।।

जलोपरि भ्रमण-मन्त्र

"ॐ रमायै रामाय महेशाय महेशिन्यै इन्द्राय इन्द्राण्यै ब्रह्मणे ब्रह्माण्यै नमो नमः रुद्राय रुद्राण्यै तोयं स्तंभय वरुणं स्तंभय शोषय गच्छ गच्छ पादुकां देहि देहि स्वाहा ।। " इति मन्त्रः । लक्षजपेनास्य सिद्धिः ।

कृष्णपक्षकी अष्टमीको रात्रिमें नदीके किनारे श्मशानभूमिमें जाकर षोडशोपचारोंसे नारायण लक्ष्मी, शिव दुर्गा, इन्द्रशची, ब्रह्मा ब्रह्माणी, रुद्र और रुद्राणी इन सब देव देवियोंका पूजन करके १ वर्षतक १ लाख मन्त्र जपे तो यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है, फिर १०८ बार जप कर जलके उपर चलना चाहिये ।

स्योनाकबीजचूर्णं कृत्वाथारुह्य पादुकायुगलम् ।
मह्यामिव सलिलोपरि पर्यटति नरः सुविस्पष्टम् ।।९७।।

अरलू वृक्षके बीजोंका चूर्ण कर पादुकाओंपर लेप कर सुखा ले, पीछे उक्त पादुकाओंपर चढकर यदि जलमें जाय तो भूमिके समान उक्त जलमें चल सकता है ।। ९७ ।।

नवनीतरुक्मगैरिकदुर्गंधामीनतैलकल्केन ।
सकलस्रोतोभंगाद् भ्रमति नरो नक्रवत्सलिले ।। ९८ ।।

मक्खन, सुवर्ण, गेरू, प्याज इन सबको समान ले कल्क बनाकर मछलीके तेलके साथ यदि मुखादि छिद्रोंमें लगाकर जलमें प्रवेश करे तो मनुष्य नाकेके समान जलमें भ्रमण कर सकता है ।। ९८ ।।

अथ मृतसञ्जीवनीविद्या

शिव उवाच

"ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यः शर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः ।" मंत्रः ।
भौमे श्मशाने अन्यैरदृष्टे लक्षजपेन सिद्धिः ।

मंगलके दिन श्मशानमें जाकर जनशून्य स्थानमें बैठ उपरोक्त मन्त्रको ? लक्ष जपे पीछे कार्य करना चाहिये ।।

लिंगमंकोलवृक्षाधः स्थापयित्वा प्रपूजयेत् ।
नवं घटं च तत्रैव पूजयेल्लिगसन्निधौ ।
वृक्षं लिंगं घटं चैव सूत्रेणैकेन वेष्टयेत् ।। ९९ ।।

अंकोल वृक्षके नीचे शिवलिंगको स्थापित कर पूजन करे और शिवलिंगके समीप नवीन घट स्थापन कर उसका पूजन करे फिर उस वृक्षको घट और शिवलिङ्गसमेत सूतके डोरेसे वेष्टन करे ।। ९९ ।।

चतुर्भिः साधकैर्नित्यं प्रणिपत्य क्रमेण तु ।
एवं द्विद्विदिनं कुर्यादघोरेण समर्चयेत् ।। १०० ।।

फि॰ चार साधकों के साथ प्रतिदिन क्रमानुसार प्रणाम करे, अघोर मन्त्रसे दो दो दिन प्रत्येक साधक शंकरका पूजन करे ।। १०० ।।

पुष्पादिपलपाकांतं साधनं कारयेद् बुधः ।
फलानि पक्वान्यादाय पूर्वोक्तं पूरयेद्घटम् ॥ १०१ ॥

जब तक उस वृक्षमें फल फूल लगें तबतक इस प्रयोगको करे, जब उस वृक्षके फल पक जायँ तब बुद्धिमान् उसके फल लेकर घटको पूर्ण करे ॥ १०१ ॥

तद्घटं पूजयेन्नित्यं गंधपुष्पाक्षतादिभिः ।
तुषवर्जं ततः कुर्याब्बीजानां घर्षयेन्मुखम् ॥ १०२ ॥

और उस घटकी प्रतिदिन फूल चन्दन अक्षतोंसे पूजा करे फिर सब बीजोंको भूसीसे अलग करके मुखमें घिसे ॥ १०२ ॥

तन्मुखे बृहणं वृत्तं किञ्चित्किञ्चित्प्रलेपयेत् ।
विस्तीर्णमुखभागान्तः कुम्भकारकरोद्भवाम् ॥१०३॥

फिर कुम्हारके हाथका बना बडे मुंहवाला मिट्टीका पात्र लाकर उसमें बीज डाल सुहागेके चूर्णसे उसके मुँहको लेसे ॥ १०३ ॥

मृत्तिकां लेपयेत्तत्र तानि बीजानि रोपयेत् ।
कुंडल्याकारयोगेन यत्नादूर्ध्वमुखानि वै ॥१०४॥

ऊपरसे मिट्टीका लेप कर उसमें कुण्डलीके आकारसे बीजोंको बो दे ॥ १०४॥

शुष्कं तं ताम्रपात्रोर्ध्वं भांडं देयमधोमुखम्
आतपे धारयेत्तैलं ग्राहयेत्तं च रक्षयेत् ॥ १०५ ॥

जब वह सूख जाय तब उसपर तांबेका पात्र रख नीचेको मुख कर दे और आँच लगाकर तेल निकालक उस तेलको यत्नसे रखे ॥ १०५ ॥

माषार्द्धं चैव तत्तैलं माषार्द्धं तिलतैलकम् ।
तस्य देयं मृतस्यैतत्सम्यक् तस्य सिलेन तु ॥ १०६ ॥

तत्क्षणाज्जीवयेत्सत्यं गतो वापि यमालयम् ।
रोगादिसर्पादिमृता पुनर्ज्जीवन्ति निश्चितम् ।। १०७ ।।

आधे मासे तिलके तेलमें आधे मासे इस तेलको मिलाकर मृतक पुरुषके शरीर पर डाले तो उसी समय वह मृतक पुरुष पुनर्जीवित हो जाता है । रोगादिसे वा सर्पके काटनेसे वा जिस किसी प्रकारसे पुरुषकी मृत्यु हुई हो तो इस प्रयोगसे वह पुन: जीवनलाभ करता है ।। १०६ ।। १०७ ।।

अदृश्योपाय-मन्त्र

"ॐ हुंफट् कालि कालि मांसशोणितं खादय खादय देवि मा पश्यतु मानुषेति हुंफट् स्वाहा ।। " इति मन्त्रः ।। लक्षजपेन सिद्धिः ।।

उपरोक्त मन्त्र अदृश्य होनेका है, एकलाख जपनेसे सिद्ध होता है, पहलेसिद्ध कर ले पीछे कार्य करे ।

अर्कशाल्मलिकार्पासपट्टपङ्कजतन्तुभिः ।
पंचभिर्वर्त्तिकाभिश्च नृकपालेषु पंचसु ।। १०८ ।।
नरतैलेन दीपाः स्युः कज्जलं नृकपालके ।
ग्राहयेत् पंचभिर्यत्नात्पूर्ववच्च शिवालये ।। १०९ ।।
पञ्चस्थानीयजातं तु एकीकुर्याच्च तं पुनः ।
मंत्रयित्वाऽञ्जयेन्नेत्रे देवैरपि न दृश्यते ।। ११० ।।

आक, सेमर, कपास, रेशम और रेशमके डोरे इन पाँचोंकी पाँच बत्ती बनाकर पाँच मनुष्योंकी पाँच खोपडियोंमें रख मनुष्यका तेल भरकर दीपक जलाकर शिवालयमें वा जनशून्य स्थानमें काजल पारे, फिर पाँचों खोपडियोंमें पारे हुए काजलको एक करके १०८ बार मन्त्रसे अभिमंत्रित कर नेत्रमें आँजनेसे मनुष्य देवताओंको भी नहा दीखेगा, फिर मनुष्यकी तो बात ही क्या है ।। १०८-११०!!

गोरोचनेंगुदीतरुकुसुमं मार्जारस्याक्षि रोमाणि ।
द्विकभुक्तोच्छिष्टयुता गुटिकेयं कल्पलतिकाख्या ।।१११।।

गोरोचन, इंगुदीवृक्षका फूल, बिल्लीके नेत्र, रोम इनकोले काककी उच्छिष्टमें मिलाकर गुटिका बनाकर त्रिलोहसे वेष्टित कर मन्त्रसे अभिमन्त्रित कर मुखमें रखनेसे पुरुष अदृश्यभावको प्राप्त होगा, अर्थात् किसीको नहीं दीखेगा । इस गुटिकाको कल्पलतिका कहते हैं ।। १११ ।।

इति श्रीरावणशंकरसंवादे उड्डीशतन्त्रे पण्डितश्यामसुन्दरलाल-त्रिपाठिकृतभाषानुवादसहिते मन्त्रसिद्धिनिरूपणादि-विविधविषयकथोपकथने उत्तरार्द्ध समाप्तम् ।

समाप्तश्चायं ग्रन्थः

पुस्तकें मिलने के स्थान

१) खेमराज श्रीकृष्णदास,
श्रीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
खेतवाडी, मुंबई - ४०० ००४.

२) खेमराज श्रीकृष्णदास,
६६, हडपसर इण्डस्ट्रिअल इस्टेट
पुणे - ४११ ०१३.

३) गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
लक्ष्मीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
व बुक डिपो,
अहिल्यावाई चौक, कल्याण
(जि. ठाणे - महाराष्ट्र)

४) खेमराज श्रीकृष्णदास,
चौक - वाराणसी (उ.प्र.)

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान ;

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट.
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१.
दूरभाष - ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS